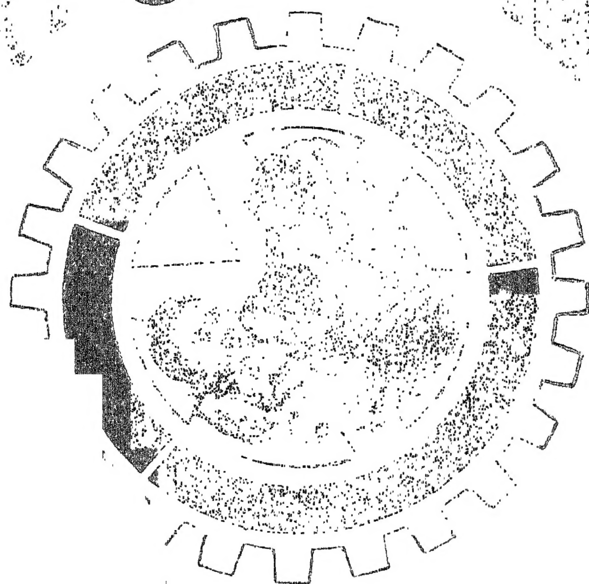
रोटरी की स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष में

शिशु का भविष्य



या

जच्चा-बच्चा

मूल्य १॥।)

डा० पी. एल. चोपरा

शिशु का अधिकार

या

अच्छा बच्चा

लेखक—

डा० पी. एल. चोपरा

अध्यक्ष—कौटुम्बिक नियोजन केन्द्र, जबलपुर

प्रथम संस्करण अप्रैल १९५५



रोटरी क्लब जबलपुर के तत्वाधान में प्रकाशित

प्रकाशक—

निर्माण प्रकाशन

५१ राइट टाउन, जबलपुर

रोटरी की ओर से



मानव का विकास शैशवावस्था से ही होता है। शिशु की संरक्षिका उसकी माता होती है। जीवन के शुरू दिनों की देख-भाल में जच्चा-बच्चा का ही नहीं समाज और संसार का स्वास्थ्य, उत्कर्ष व भविष्य छिपा रहता है। अत्यधिक मातृ एवं शिशु की मृत्यु संख्या हमारी प्रगति में बाधक हैं। इसका मुख्य कारण जच्चा-बच्चा की देखभाल की अज्ञानता होना ही है। इस अन-भिज्ञता को दूर करना एक बड़ी भारी सेवा है क्योंकि तभी हर शिशु अपना अधिकार प्राप्त कर, सफल व सक्रिय नागरिक बन कर मानव-मात्र के कल्याण में सहयोग दे सकेगा।

रोटरी एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था है। उसका लक्ष्य सेवा है। उत्तरोत्तर उन्नति करती और राजनीतिक बंधनों को तोड़ती हुई आज वह स्वर्ण-जयंती मना रही है। इस शुभ अवसर के स्मरणार्थ जबलपुर रोटरी क्लब कुछ ऐसी सेवा करना चाहता है जो जन कल्याण में भी सहायक हो। इसी दृष्टिकोण से हमने अपने मित्र व लेखक डा. पी. एल. चोपरा से अनुरोध कर जच्चा-बच्चा की देखभाल पर यह पुस्तक लिखवाई है। चिकित्सा व लेखनी पर अधिकार होने से उनकी पुस्तकें साहित्य क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं।

इस पुस्तक को उपयोगी बनाने में उन्होंने कोई कसर नहीं उठा रखी है। अनावश्यक पेचीदगियों में न पड़ व्यवहारिक ज्ञान

पर लेखक ने अधिक जोर दिया है। उपयुक्त चित्रों ने विषय को सुबोध व रोचक बना दिया है। हम डा. चोपरा के विशेष रूप से कृतज्ञ हैं कि उनने हमें इस समय यह पुस्तक लिखकर दी है।

ऐसी उपयोगी पुस्तक को अपने तत्वावधान में प्रकाशित करवाकर हमने स्वर्ण जयंती का उचित स्मारक ही प्रस्तुत नहीं किया है वरन् सेवा का एक नवीन कदम आगे बढ़ाया है जो रोटरी का पवित्र ध्येय है।

२०-४-५५ (डा.) सत्याचरण बराट

जबलपुर. अध्यक्ष, रोटरी स्वर्ण जयंती समारोह, जबलपुर।



लेखक

भूमिका

प्राकृतिक साधनों का बाहुल्य होते हुए भी हम पिछड़े हुए हैं। ऐसा क्यों? इसके कारण स्पष्ट है। हमारी जीवन-अवधि (Span of life) दूसरे उन्नत राष्ट्रों की ६० व ७० वर्ष की तुलना में केवल २७ वर्ष ही है, साथ ही साथ मिश्र को छोड़ हमारी मृत्यु संख्या संसार भर में सबसे अधिक है। हमारे अपाहिजों (अंधे, लूले, लंगड़े, गूंगे, कोढ़ी आदि) की एक बहुत भारी संख्या है। अभी भी बीमारियां व भिखारी (हमारी स्वास्थ्य एवं आर्थिक समस्याएं) हमारे काबू के बाहर हैं। गरीबी, अज्ञानता और निरक्षरता ने हमें आलसी और अकर्मण्य सा बना रखा है। इन सब कारणों से हम अपने साधनों का केवल एक तिहाई हिस्सा ही उपयोग कर पाते हैं और एक भूखे, नंगे व रोगी का जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

पर यह सब कब तक चलेगा? अनभिज्ञता और अंध-विश्वास कब तक हमारे भाग्य की बागडोर संभालेंगे? हमें हमारी मातृ व शिशु मृत्यु-संख्या में छिपी हुई अकथ हानि को समझना है और आने वाली पीढ़ी का उचित मार्ग दर्शन करना है।

आजकल प्राय: सभी स्त्रियां जचकी के नाम से ही भय खातीं हैं। यह भय की गलत धारणा दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। इसी भय के कारण जचकी के समय होने वाला दर्द (प्रसव वेदना) अधिक मालूम पड़ता है। इस दर्द को कम करना ही वर्तमान चिकित्सा का प्रथम लक्ष्य है क्योंकि इससे सम्बन्धित विचार स्त्री के यौनिक, पारिवारिक व सामाजिक जीवन पर बहुत अधिक प्रभाव डालते हैं। वह मातृत्व से डरती

है और वह भय के कारण, जानबूझ कर व समझकर नहीं, इससे बचना चाहती है। इस तरह वह उलझी व उद्विग्न रही आती है। इस विषय की सही जानकारी ही उसकी उलझन व उसके भय को दूर कर उसे मातृत्व के पवित्र व स्वाभाविक कर्त्तव्य को हंसी खुशी निभाने के लिये तैयार कर सकती है।

साथ ही प्रसवाग्र व प्रसवोपरान्त देखभाल (Ante and postnatal care), नवजात शिशु की सेवा तथा किशोर का उचित मार्ग दर्शन समाज की नींव को दृढ़ करता है। हर ग्रहस्थ को इनकी व स्वास्थ्य की साधारण बातों से जानकारी रखना चाहिये, जिससे वह खुद को व परिवार वालों को आनेवाले खतरों से बचा सके। इस पुस्तक का यही उद्देश्य है और इसीलिये विशेष बातों को जोर देने के लिये दुहराने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं रखी गई है और मंहगे साधनों के बदले घरेलू, सुलभ व सस्ते साधनों का भी सुझाव दिया गया है।

मेरी 'बाल विकास प्रथम सात वर्ष' पुस्तक के प्रकाशित होने के बाद ही नगर के प्रसिद्ध जनसेवी डा० सत्याचरण जी बराट मुझे इस विषय पर लिखने के लिये प्रोत्साहित कर रहे थे। वे स्वयं नगर की समाज शिक्षा समिति एवं रोटरी संस्था के एक लोकप्रिय और सक्रिय कार्यकर्ता हैं।

हर्ष का विषय है कि इन्हीं की अध्यक्षता में जबलपुर की रोटरी संस्था, 'रोटरी इंटरनेशनल' की स्वर्ण-जयन्ती मना रही है। यह मेरा सौभाग्य है कि मेरी यह रचना इस जयन्ती के स्मरणार्थ रोटरी क्लब जबलपुर के तत्वावधान में प्रकाशित हो रही है। यह 'रोटरी' की विश्वबंधुत्व भावना का प्रतीक है।

इस पुस्तक के लिखने में अनेक ग्रन्थों से सहायता ली गई है। मैं उनके लेखकों व प्रकाशकों का हृदय से आभारी हूँ।

जबलपुर

२०-४-५५

अनुक्रमणिका



समर्पण

हर नव-दम्पति को

★



अधिकार की चिन्ता



क्या है ?

विषय प्रवेश

शिशु का अधिकार: –

प्रत्येक माता-पिता अपनी संतान को सुन्दर, स्वस्थ, व दीर्घायु देखना चाहते हैं। यदि बचपन की किलकारियां मां बाप को खुश करतीं हैं तो युवावस्था की कर्त्तव्य-निष्ठा समाज व राष्ट्र की उन्नति करती है। माता के स्वास्थ्य व उसकी देखभाल ही से बालक का, नहीं नहीं पूरे देश व संसार का भविष्य बनता व बिगड़ता है इसीलिये तो भारतीयों ने नारी को आदि शक्ति व राष्ट्र-निर्मात्री कहा है।

जब माता व बालक के स्वास्थ्य का देश के जीवन पर इतना गंभीर असर पड़ता है तब इनकी देखभाल करना देश का पवित्र कर्त्तव्य हो जाता है। भारत के लिये तो यह विषय और भी महत्व का है क्योंकि हमारी मातृ व शिशु-मृत्यु संख्या संसार में इजिप्ट को छोड़ सबसे अधिक है।

इतिहास ने साफ बता दिया है कि शिशु को उसका जन्म-सिद्ध अधिकार मिलना चाहिये और वह अधिकार है—उसका उत्तम वंश तथा उचित लालन पालन, वंश उसे अच्छे काम करने की प्रवृत्ति व स्वभाव देता है और उचित लालन पालन उसके उत्तम स्वभाव को विकसित होने का, निखरने का पूरा अवसर दिलाता है जिससे वह देश व विश्व का कल्याण कर सकता है।

ऊपरी ठाट-बाट व सुन्दरता से किसी के वंश का पता नहीं चलता, वह तो उसके गुणों व आचरण में ही छिपा रहता

है। बालक गर्भ से ऐसे गुण लेकर पैदा होता है जो विशेष परिस्थितियों में विशेष प्रकार के स्वभाव बनाते हैं अर्थात् वंश के सिवाय हमारा शिक्षण भी बालक के स्वभाव को बनाता है। यहां विषयान्तर होने के भय से इस विषय पर इतना कहना काफी है कि स्नायु दौर्बल्यता (Nervousness), रोग प्रति रोधक शक्ति (Resistance power against diseases) व भावुकता हमें मां बाप से ही मिलतीं हैं। मां बाप हमें उपदेश दे सकते हैं पर क्षय नहीं। शराबी का लड़का शराबी नहीं बनता पर शराबी का वातावरण उसे शराबी बना देता है। साथ ही अंतः स्रावी ग्रन्थि रस और जीवन तत्व (Hormones & Vitamins) बाद में अपना अपना हाथ रखते हैं।

नारी जाति को भी शिशु पालन बेगार नहीं समझना है। माता बनने के लिये वह लालायित रहती है पर शिशु पालन की जिम्मेवारी से वह घबरा उठती है। इसी प्रकार सगे सम्बन्धी भी अनजाने में ऐसा व्यवहार करते हैं जो बालक के जीवन को बिगाड़ देता है। इन सबका यह रवैया ठीक नहीं है।

हमारा भावी शिशु हम सबसे अपना अधिकार मांगता है और वह अधिकार हमें व हमारी समाज को समझना है और बिना हिचकिचाहट के उसे देना है।

हमारा कर्तव्य :—

हम अपने लिये नहीं जीते, हमारा जीवन हमारी संतान की उन्नति के लिये, हमारे देश के उत्थान के लिये है। हमारा हर कदम समाज पर असर डालता है। हमें समाज को ऐसे बच्चे देना है जो सक्रिय और सफल नागरिक बन सकें। यदि हम आर्थिक दृष्टि से उनका लालन पालन करने में असमर्थ हैं,

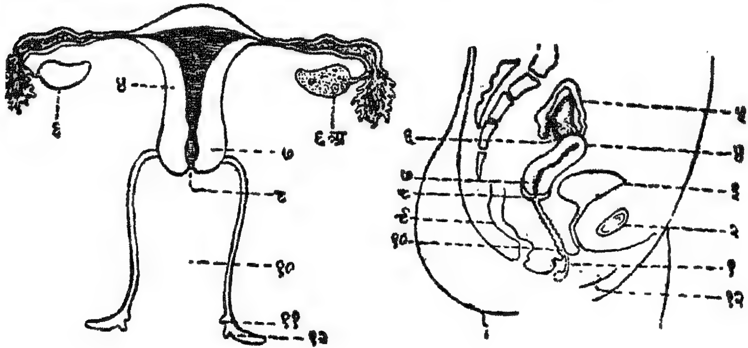
यदि हम चरित्रहीन हैं (भले ही समाज की नजरों में सभ्य हों), यदि हम वंशानुगत रोगों (Heriditary diseases) से पीड़ित हैं और यदि हममें इतनी बुद्धि नहीं है, इतनी शक्ति नहीं है कि हम बालकों के अधिकार समझ सकें व उन्हें दे सकें तो आदर्श की दृष्टि से हमें बच्चे पैदा करने का कोई अधिकार नहीं है। ऐसी हालत में हमें संतति-निग्रह की विधियों का सहारा लेना चाहिये। परिवार नियोजन का ध्येय बिलासी बनना नहीं है वरन् अपनी हैसियत के अनुसार हमें देश को स्वस्थ व जिम्मेवार नागरिक देना ही है। हमें समझना है कि हमारे गृहस्थ जीवन में ही हमारा, हमारी समाज व हमारे देश का सुख व स्वार्थ गुथा हुआ है।

हर व्यक्ति में यह कहने का साहस होना चाहिये कि उसने वंश से मिली हुई कमजोरियों को मसल दिया है तथा अपने बच्चों के लिये वह सब कुछ कर सका है। कहा गया है कि बच्चा अनुभव करता है, युवक गलतियां करता है, अधेड़ समझ कर सुधरने की कोशिश करता है और वृद्ध सुधर कर दूसरों को सुधारता है। हमारे बड़े बूढ़े ही परिवार के अगुवा रहते हैं। उनका व्यवहार ही घर की नई नवेली बहू को बहू से जच्चा और जच्चा से सफल माता बना कर संतान के द्वारा राष्ट्र के नाम पर चार चांद लगा सकता है। उन्हें परिवार, समाज व देश का सही मार्ग दर्शन करना चाहिये।

गर्भाधान

पुरुष बीज (वीर्य कीट) और स्त्री बीज (डिम्ब) के सफल मेल से गर्भ बीज बनता है और इस मेल को ही गर्भाधान कहते हैं। यदि स्त्री बीज का मेल नहीं होता तो प्रकृति उसे मासिक धर्म (माहवारी) के द्वारा बाहर फेंक देती है। इस प्रकार माहवारी होना यह बतलाता है कि कन्या अब युवती हो रही है पर इतना ध्यान रखना चाहिये कि अक्सर शुरू के मासिक धर्मों के समय डिम्ब पैदा ही नहीं हुआ करता है। शायद इसीलिये हमारे यहां

सामने से— स्त्री के यौन अंग बाजू से—



चित्र नं० १

१. बारथोलियन ग्रन्थि २. भगास्थि ३. मूत्राशय ४. गर्भाशय ५. डिम्बनलिका ६. डिम्बाशय ६ अ. डिम्बाशय कटा हुआ ७. ग्रीवा ८. ग्रीवा का वहिर्मुख ९. मलाशय १०. योनि ११. क्षुद्र भगोष्ठ १२. वृद्ध भगोष्ठ।

कन्या के विवाह की आयु १६ वर्ष ठहराई हुई है क्योंकि तब तक यह पक्का हो ज.ता है कि डिम्ब का बनना प्रारंभ हो गया है और कन्या अपनी जिम्मेवारी समझने लायक भी बन गई है। साथ ही साथ समाज बाल विवाह के कुपरिणामों से बचा रहता है।

डिम्ब १/१०० इंच का गोल कण सा होता है और वीर्य कीट १/५०० इंच लम्बा हंटरनुमा रहता है। हंटर की मूठ की जगह वीर्य कीट का सिर रहता है। यह सिर द्वारा स्त्री बीज में घुसता है पर पूंछ बाहर ही गल जाती है। यह मेल डिम्ब के जीवनकाल के पहिले २४ घंटों तक डिम्बनलिका में हुआ करता है। गर्भ ठहरना स्त्री के यौन अंगों पर तो निर्भर है ही पर वह वीर्य कीटों की संख्या, वीर्य के मिगदा र आदि अन्य बातों पर भी निर्भर रहता है; इसलिये स्त्री के गर्भवती न होने पर स्त्री को ही दोष देना एक बड़ी भारी भूल है। हो सकता है कि दोष स्त्री में हो अथवा स्त्री पुरुष दोनों में हो या केवल गर्भाधान का समय ही अनुकूल न हो। इस विषय पर किसी जानकार से सलाह लेना उचित है।

पुत्र व पुत्री—विशेष रात्रियों में सहवास करने से व विशेष भोजन से पुत्र व पुत्री का जन्म होता है तथा रात्रि के समय का भी प्रभाव पड़ता है। भ्रूण हृदय की गति यदि १४० प्रति मिनट से अधिक है तो लड़की की संभावना रहती है। यदि पेट का बायां बाजू भरा हुआ तो लड़की का और दायां बाजू भरा हुआ तो लड़के का अनुमान लगाया जाता है। लड़की के समय गर्भवती का सुस्त और लड़के के समय चुस्त रहना कहा गया है। इन सबकी सत्यता से लेखक अपरिचित है इसलिये यह विषय यहीं छोड़ दिया जाता है।

हां, शांतिपूर्ण वातावरण और सात्विक विचार सहवास के समय आवश्यक हैं। रात्रि का तीसरा पहर, जब एक नींद ले ली गई हो और थकावट दूर हो गई हो, इसके लिये उत्तम है। इस समय तक भोजन पच जाता है और बाद में दम्पत्ति आराम-पूर्वक एक नींद ले सकते हैं। दिन में सहवास मना किया गया है क्योंकि यह कामुकता और बिलासिता बतलाता है। बिलासिता एक दुर्गुण है और हर व्यक्ति अपनी संतान को इससे दूर रखना चाहता है। इस प्रकार स्वस्थ शरीर व विचारों से ही बालक का यह प्रथम संस्कार (गर्भाधान) पूरा होना चाहिये।

एक दिन—गर्भ के लक्षण

अचानक एक दिन फुसफुसाहट शुरू होती है। पहिले पति-पत्नी में, सास-बहू में और फिर यह घर भर में खुशी फैला देती है। ऐसा क्यों न हो? अब बहू माताका पद लेने जा रही है। उसके और परिवार के मधुर स्वप्न अब साकार होने जा रहे हैं। इस हर्ष और उल्लास में यह बात ध्यान रखने योग्य है कि कभी कभी अच्छे अच्छे अनुभवी भी पहले माह दो माह में धोखा खा जाया करते हैं इसलिये जब तक गर्भ ठहरने का पूरा निश्चय न हो जाय तब तक ऐसी खबर घर से बाहर निकालना ठीक नहीं है। इस भूल के कारण कई परिवारों को किरकिरी होती देखी गई है। वैसे तो घर की बड़ी बूढ़ियां इस स्थिति को शीघ्र ही भांप जाती हैं पर फिर भी नीचे लिखे हुए लक्षण याद रखना चाहिये। इन्हें जनसाधारण आसानी से पहिचान सकता है।

(१) मासिक धर्म का रुकना :—पहिले कहा जा चुका है कि डिम्ब (स्त्री बीज) के सफल मेल न होने से (वीर्य कीट से संयुक्त न होने से, गर्भाधान न होने से) वह मासिक धर्म द्वारा बाहर फेंक दिया जाता है। जब स्त्री गर्भवती हो जाती है तो मासिक धर्म के होने का सवाल ही नहीं उठता अर्थात् मासिक धर्म रुक जाता है। कभी कभी किसी अन्य दशा में भी यह रुक जाता है पर साधारण अवस्था में इसे अपवाद ही समझना चाहिये।

(२) जी मचलाना—कई स्त्रियां इतनी छुई-मुई व कोमल होती हैं कि गर्भ ठहरते ही उनकी पाचन क्रिया बिगड़ जाती है। उनका जी मचलाने लगता है। किसी किसी का तो

तीसरे दिन से ही जी मचलाना शुरू हो जाता है। आम तौर से तीसरे चौथे माह तक ही जी मचलाता है पर कभी कभी पूरे दिनों तक गर्भवती को यह कष्ट रहता है।

(३) स्वभाव व प्रकृति में परिवर्तन—कई स्त्रियों का स्वभाव इतना अस्थिर हो जाता है कि उनमें गर्भ के ठहरते ही चिड़चिड़ापन आ जाता है, कई शांत हो जाया करती हैं। किसी किसी को मिट्टी खाना अच्छा लगता है। यह गन्दी आदत है। कई गर्भवतियों की अजीब अजीब इच्छाएं हुआ करती हैं।

(४) पेट का बढ़ना—यह तो बच्चेदानी याने गर्भाशय के बढ़ने के कारण होता है धीरे धीरे गर्भाशय मामूली दशा (तिकोना, तीन इंच लम्बा, दो इंच चौड़ा, एक इंच मोटा) से ३५ गुने वजन व ५०० गुने विस्तार (घनफल Volume) वाला तक हो जाता है। साधारणतः तीसरे महीने के आसपास ही वह भगास्थि (Pubic bone) के ऊपर मालूम पड़ता है। इसलिये इसके बाद ही पेट का बढ़ना दूसरों को दिखता है। नवें माह तक बाढ़ जारी रहती है और यह वक्षोस्थि (Sternum) के निचले कोने से एक इंच के लगभग ही रह जाता है। आखिरी माह में जब गर्भ स्थिर होने लगता है तब उंचाई कुछ कम हो जाती है।

(५) आंचलों में परिवर्तन—पहिले महिने के बाद इनका बढ़ना शुरू हो जाता है। कुछ कड़ापन व गांठें सी मालूम पड़ती है। चूचुक (Nipple) के आसपास के गुलाबी रंग के गोले का रंग काला पड़ना शुरू हो जाता है। तीसरे चौथे माह से चूचुक को दबाकर एक दो बूंद दूध भी निकाला जा सकता है।

(६) गर्भ रेखाएं (किकीस)—आंचलों व पेट के बढ़ने से इनके ऊपर के चमड़े की भीतरी तह फट जाया करती

जिससे वहां पर टेढ़ी मेढ़ी हलके रंग की रेखाओं के रूप में दाग पड़ जाते हैं। ये दाग ही गर्भ रेखाएं हैं।

(७) आंख के आसपास गड्ढे या काली लकीरें—जी मचलाने के कारण भोजन में गड़बड़ी हो जाती है। मानसिक परिवर्तन व चिन्ता के कारण नींद बराबर नहीं आ पाती तथा यदि बराबर देख भाल न की गई तो कमजोरी बढ़ती जाती है। ये ही इन काली लकीरों के कारण हैं।

(८) गर्भ का हिलना डुलना—यह तन्दुरुस्त बच्चे की निशानी है। साढ़े चार माह के बाद गर्भवती इस हलचल को अनुभव करती है और आखिरी समय तक यह चालू रहती है। इस हिलने डुलने के बंद होने पर चिकित्सक से तुरन्त पूछ ताछ करनी चाहिये।

इतना सब तो मामूली आदमी भी समझ बूझ सकता है पर कुछ विशेष जांच केवल चिकित्सक वर्ग ही कर सकता है। वे ये हैं:—

(१) योनि परीक्षण (examination per vagina) से ग्रीवा की नरमाहट को पहिचानना।

(२) गर्भवती के पेशाब में विशेष तत्वों की जांच।

(३) गर्भवती के पेशाब की सुई (Injection) विशेष प्रकार की चुहियों में देकर उनका डिम्ब-परीक्षण।

(४) विशेष इन्जेक्शन देनाः—यदि स्त्री गर्भवती नहीं होती तो एक सप्ताह के अन्दर उसका मासिक धर्म चालू हो जाता है। यदि गर्भवती होती है तो इस सुई का गर्भ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

(५) भ्रूण हृदय की ध्वनि सुनना:-यह सोलहवें से अठारवें हफ्ते तक से गर्भ की स्थिति के अनुसार सुनाई देना आरंभ होती है। इसकी गति १३० से १६० प्रति मिनट रहा करती है। यह पूरे दिनों तक सुनाई पड़ती है।

(६) क्ष किरण जांच—इससे भ्रूण की हड्डियां देखी जा सकती हैं।

झूठा गर्भ—यहां यह बतलाना आवश्यक है कि कई स्नायु दौर्बल्यता से पीड़ित (Nervous) व बच्चे के लिये बहुत अधिक इच्छुक स्त्रियों का मासिक धर्म अपने आप रुक जाता है तथा वे गर्भ ठहरने के सभी लक्षणों का अनुभव करने लगती हैं। कई बांझ स्त्रियां सास व पति के कोप (?) से बचने के लिये इस तरह का ढोंग-धतूरा किया करतीं हैं। कई धूर्त औरतें धनिकों को फंसाकर भी ऐसे प्रपंच रचा करतीं हैं। कभी कभी डिम्ब की या अन्य विशेष बीमारियों में भी पेट बढ़ता है और मासिक धर्म रुक जाता है। इसलिये शक पड़ने पर इस झूठे गर्भ में फंसे रहना ठीक नही है पर आम तौर से इसका शक नहीं होना चाहिये और न इससे डरना चाहिये।

प्रसव के पहिले

गर्भाधान की महान् आश्चर्यजनक घटना प्रकृति का सर्वोत्तम वरदान है। नारी उसे इस कार्य में पूरा पूरा सहयोग देती है और इसीलिये उसे जगत ने जगज्जननी का पद दिया है। हर नारी में मां बनने की अभिलाषा व लालन पालन के लिये आवश्यक कोमल भावनाएँ जन्म से रहती हैं। उसे प्रकृति ने इस योग्य भी बनाया है। परन्तु आज के वातावरण में वह घबरा उठी है और गर्भवती होते ही न जाने उसके मन में कौन कौन से विचार आते हैं। उस पर कैसी बीतेगी? प्रसवकाल कैसा होगा? वह स्वस्थ तो उठ खड़ी होगी? आदि, आदि। उसे इधर उधर की बातों में, अन्ध विश्वासों में फंसना नहीं है।

उसे क्या करना है?—उसे याद रखना चाहिये कि वह तो अपना स्वाभाविक कर्त्तव्य जिसके अनुकूल ही उसका शरीर बनाया गया है पूरा करने जा रही है तथा इसमें घबराने की कोई बात नहीं है। अब वह स्त्री के पद को छोड़ मां का पद ले रही है जिसके साथ उसकी जिम्मेवारी भी बढ़ रही है। उसे दूसरे की कही सुनी बातों पर ही बच्चे की देखभाल नहीं करना है। आने वाला बच्चा उसका होगा जिसे राष्ट्र के उत्थान में सहयोग देना है। उसे अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए नवजात शिशु की देखभाल की पूरी जानकारी ही नहीं रखना है वरन् पूरी तैयारी करना है। प्रसव के पहिले के इन दिनों में ही उसे अपनी शारीरिक व मानसिक कमजोरियों को दूर कर प्रसव के लिये यथा-योग्य तैयारी करना है और शिशु की पहिले कुछ महीनों की जरूरतों विशेषकर कपड़े, बिछावन आदि को इकट्ठा कर लेना है।

उसे इस बात को अच्छी तरह समझ लेना है कि उसकी इस देखभाल पर ही उसकी भविष्य की काम करने की ताकत बनी रहेगी। यह अवस्था बीमारी की नहीं है परन्तु इस समय उससे भी अधिक होशियार रहने की जरूरत है कि जिससे इसमें पाई जाने वाली सामान्य हालत से इधर उधर तबियत होने पर फौरन उसको ठीक किया जा सके। इस देखभाल को प्रसवाग्र अर्थात प्रसव के पहिले होने वाली देखभाल (Ante-natal care) कहते हैं। इसे दो भागों में बांटा जाता है।

गर्भवती की देखभाल—यहां पर इतना दुहराना अनुचित न होगा कि वह गुप्त रूप से एक रोगी (Latent patient) की दशा में है। यदि रोगी को रोग से अच्छे होने के लिये अपनी मानसिक व शारीरिक शक्ति खर्च करनी पड़ती है तो गर्भवती को भी गर्भ पालने के लिये वही करना पड़ता है। उसके हर अंग व मंडल (Organ & system) को अधिक काम करना पड़ता है। उसे अधिक पौष्टिक भोजन पचाना पड़ता है तथा उसी प्रकार उनमें से मल-मूत्रादि के रूप में निकलने वाले अनुपयोगी पदार्थों को अधिक मात्रा में बाहर फेंकना पड़ता है।

अपने शरीर की अधिक जानकारी उसे ही रहती है और अपनी देखभाल भी खुद उसी को करनी पड़ती है। जरा सी गड़-बड़ी दिखने पर चाहे वह हानिकारक न भी हो उसे उसका ज़िकर पति, सास व चिकित्सक से तुरन्त ही कर देना चाहिये।

१. शरीर की रक्षा—शरीर की देखभाल ही सबसे ज्यादा महत्व रखती है। इसके भी कई हिस्से किये जा सकते हैं। वैसे तो भोजन भी इसी का अंग है पर हम उसकी अधिक उपयोगिता देखते हुए उस पर अलग से विचार करेंगे।

अ – मानसिक शांति व आराम—आराम का विचारों से बहुत ही नजदीकी संबंध है। यदि आदमी निठल्ला बैठा रहता है तो उसके विचारों में खलबली पैदा होना, इधर उधर के मनहूस विचार आना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ये उसकी आदतों को बिगाड़ उसका शारीरिक स्वास्थ्य भी बिगाड़ देते हैं। चिन्ता तो किसी भी दशा में अच्छी नहीं है फिर ऐसी हालत में उसे कौन चाहेगा ? काम करना खराब नहीं है, काम में लिपे रहना बिलकुल उचित है, हाथ पर हाथ रख निठल्ले बैठे रहना अनुचित ही नहीं, मूर्खता है। हां इतना ध्यान रखना चाहिये कि थकावट नहीं आना चाहिये, थकावट आते ही आराम कर लेना चाहिये। दोपहर को घंटे आध घंटे पैरों को कुछ ऊपर उठाकर आराम करने की आदत डालना खराब नहीं है। यदि रात्रि में जल्दी आराम न मिल सके तो शाम को गद्दे पर ही घंटे आध घंटे लेटकर हाथ पैर बिलकुल ढीले छोड़ देना चाहिये। रात्रि में भी ८ घन्टे के बदले ९–१० घन्टे आराम करना चाहिये।

अक्सर पहिली जचकी के समय उसे यह कहा जाता है कि—'देखना तू अभी बच्ची है, जचकी कोई गुड़ियों का खेल नहीं है, लोहे के चने चबाना है। भला, जरा संभल कर रहना।' पर सच तो यह है कि चालीस साल की आयु में होने वाली पहिली जचकी बीस साल की (बच्ची !) आयु में होने वाली पहिली जचकी से अधिक कष्ट प्रद होती है। इसलिये नई नवेली बहू को पास पड़ोस की ऊल जलूल बातों में न आना चाहिये। किसी किस्म का शक होने पर उसे अपने हितचिन्तक व चिकित्सक से पूछताछ करने में तनिक सी भी हिचकिचाहट नहीं करनी चाहिये।

मौत मिट्टी के मौके पर जहां रोना धोना व छातियां पीटना पड़ता है, गर्भवती को नहीं जाना चाहिये। इससे मन व शरीर पर गहरा असर पड़ता है।

ब—परिश्रम—कई घरों में आराम के विषय में गलत विचार बैठे हुए हैं। कई आराम की गलत फहमी में फंस निष्क्रिय बन जाती हैं और केवल खाने और पलंग तोड़ने भर से रिश्ता रखती हैं। काम करने के बदले कामचोर बन वे व्यर्थ की हाय हाय मचाकर घर वालों को तंग कर देती हैं। यह अनुचित है, क्योंकि काम करने से एक तो उनका जी बहला रहता है, पाचन शक्ति भी ठीक रहती है, शरीर की ताकत बनी रहती है तथा बहाने बाजी की आदत भी नहीं पड़ पाती। तबियत खराब होने पर आराम करना दूसरी बात है। आलस्य किसी भी दशा में सहन नहीं किया जा सकता।

घर के कामों व खेल कूद से मुंह नहीं मोड़ना चाहिये। विशेष परिस्थितियों में ही जहां पर गर्भपात का डर होता है चिकित्सक बिलकुल आराम की सलाह देते हैं। पहिले महिनों में तो बैडमिंटन, पिंगपांग आदि खेला जा सकता है पर छठवें सातवें माह से शुद्ध वायु में पैदल घूमना ही सबसे उत्तम व्यायाम है। इन सबसे मांस पेशियों में ताकत बनी रहती है। बाहिरी अंगों के साथ ही साथ भीतरी अंग भी मजबूत बने रहते हैं। गर्भाशय जितना मजबूत रहेगा उतना ही जचकी के के समय कम कष्ट होगा।

लेटे लेटे भी कसरत की जा सकती है। यह विशेष कर तब काम में आती है जब गर्भवती को गर्भपात को छोड़ अन्य दूसरे कारणों से बिस्तर पर लिटाया जाता है या वह बाहर घूमने फिरने

नहीं जा सकती। इसमें आराम से चित लेट जाना चाहिये फिर सांस को धीरे धीरे खींचना व छोड़ना चाहिये। हाथ पैर को दांयें-बायें, ऊपर-नीचे उठाना व अलग करना, नितंब (चूतड़) को उठाना आदि भी हलकी कसरतें करने से शरीर में खून बराबर दौड़ता रहता है। इतना ध्यान रखना चाहिये कि जिस किसी कसरत में कष्ट हो उसे छोड़ देना चाहिये, साथ ही कसरत में कभी भी थकावट नहीं आने देना चाहिये। यदि घर में ही काफी काम है तो अलग से व्यायाम की कोई आवश्यकता नहीं है।

स—स्नान—उचित स्नान स्वच्छता व स्वास्थ्य प्रदान करता है। गर्म देशों में तो नहाना जरूरी हो जाता है। शरीर का मैल तो छूटता ही है पर पसीना भी अलग होता है। खुरदरे कपड़े या स्पंज से मल मल कर नहाने से शरीर में रक्त-परि-भ्रमण (खून का दौरा) अच्छी तरह से होता है जिससे शरीर स्वस्थ व सुन्दर तो बनता ही है पर साथ ही चुस्ती भी आती है, काम में जी लगता है और चित्त में हलकापन और प्रसन्नता का राज्य रखता है। ऋतु के अनुसार और सुविधा के अनुसार, गरम व ठन्डे पानी से नहाना चाहिये वैसे पहिले कुनकुने और फिर ठन्डे पानी से छींटे मारना अच्छा है। छठवें माह से टब बाथ का उपयोग ठीक नहीं है क्योंकि इस समय से योनि मार्ग में शिथिलता आने लगती है (वहां की मांसपेशियां ढीली हो जाती हैं) जिससे उसके अन्दर गन्दा पानी जा सकता है। फुहारा स्नान (Shower bath) अच्छा व आनन्ददायी रहता है।

ड—चमड़े की देख भाल—स्त्री का अंग कोमल होता है। इस समय मीठे व कड़ुए तेल की हलकी मालिश (ऋतु व

स्थान के अनुसार) अच्छी रहती है। इससे तन्तु कोमल व लचीले बने रहते हैं और खून का दौरा भी बराबर हुआ करता है।

इ—आंचल—ये धीरे धीरे बड़े व कड़े होने लगते हैं तथा इन पर गर्भ रेखाएं भी आ जाती हैं। यहां पर हलका कुनकुना तेल लगाना फायदेमन्द रहता है। इन्हें तंग चोलियों से कसना नहीं चाहिये क्योंकि इस तरह से एक तो खून का दौरा बराबर नहीं होता, दूसरे दूध बनाने वाली ग्रन्थियां कसी होने पर ठीक काम नहीं कर सकतीं और तीसरे तन्तुओं के लचीलेपन के नष्ट हो जानेसे वे शीघ्र ही ढीले पड़ बाद में लटकने लग जाते हैं। इनकी बनावट भी तो स्त्री सौंदर्य का एक प्रमुख अंग है जिसकी रक्षा करना हर स्त्री का कर्तव्य है। यदि पहिली जचकियों में दूध कम उतरता रहा हो तो जचकी के दो महीने पहिले ही से इन्हें ठंडे पानी से रोज आध घंटे धीरे धीरे रगड़ना चाहिये।

उ—चूचुक—बच्चे को दूध पिलाना इनका मुख्य उद्देश्य रहता है। कभी कभी ये अन्दर की ओर दबे रहते हैं। इन्हें उभरे रहना चाहिये तभी तो बच्चा दूध पी सकेगा। कुनकुने मीठे तेल से अंगूठे और उंगली से इन्हें धीरे मलते हुए बाहर की ओर खींचना चाहिये। साथ ही इन्हें जरा खुरदरे कपड़े से रोज हलके हाथों से रगड़ना चाहिये। इससे एक तो इन पर मैल न जम सकेगी और दूसरा इनमें कुछ कड़ापन आवेगा जिससे दूध पिलाते समय माता को तकलीफ न होगी।

फ—पेट—अधिक जचकियां होने से पेट की मांस पेशियां कमजोर पड़ जाती हैं। ऐसी दशा में पेट को विशेष पट्टियों द्वारा आसरा देना चाहिये।

ज—जांघ—यहां भी गर्भ रेखाएं हो जाया करती हैं। कभी कभी फटन भी मालूम पड़ती है। कुनकुने तेल की हलकी मालिश आराम देती है। अधिक काम से थकावट के कारण एंठन भी मालूम पड़ सकती है। हलके हलके दबाने से आराम मिलता है।

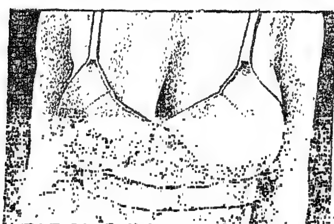
२—खुश रहना—यह तो मानी हुई बात है कि कुढ़ने से आदमी सूखता है, पाचन क्रिया बिगड़ती है और न जाने क्या क्या उसे होता है। रोगी न होते हुए भी वह रोगी बन जाता है। खुश रहने से कष्ट कम तो नहीं होते पर हां वे हलके मालूम पड़ते हैं। साथ ही खून का दौरा बराबर चलने से पाचन क्रिया अच्छी रहती है, स्वास्थ्य बनता है और यही तो हम सब चाहते हैं। गर्भवती को कष्ट में भी धीरज कदापि नहीं छोड़ना चाहिये और हमेशा प्रसन्न रहना चाहिये।

सास, मां, बहिन, ननंद, पति आदि का कर्तव्य है कि उसे हर प्रकार से खुश रखें और परिवार की चिन्ताओं को उसके पास न फटकने दें। गर्भवती को याद रखना चाहिये कि उसे किसी भी कीमत पर खुश रहना है। ताने मिलते हैं, मिलने दो इस कान से सुनो उस कान से निकाल दो। तुम खुश रहो केवल खुश।

३—पहनावा—आजकल दिखाऊ जीवन व फैशन का बोलबाला है। स्त्रियां ही अधिकतर इसकी शिकार हैं। वे बहुत ही तंग कपड़े पहिनना पसंद करती हैं जिससे अंग प्रत्यंग की रेखाएं उभर पड़ती हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह ठीक नहीं है क्योंकि कसे कपड़े रक्त संचार में बाधा डालते हैं, पसीने में गलते हैं व शरीर में साफ हवा तक नहीं लगने देते। हो सकता है कि

यह पहनावा ठंडे देशों में नुकसान न पहुँचावे पर हमारे गर्म देश में तो यह नुकसानदायक है। न जाने समाज यह क्यों देख रहा है ?

जब साधारण अवस्था में ही ये कपड़े ठीक नहीं तब जब कि शरीर का फैलाव हो रहा हो ये तो और भी ठीक नहीं है। आराम देने के बदले ये तकलीफ देंगे। इस समय के सब कपड़े ढीले चाहिये। उनका काम शरीर को ढांकना व अंगों को सहारा देना है। चोली के विषय में और पेट के सहारे की पट्टी के विषय में लिखा जा चुका है। गर्मी के दिनोंमें मलमल के हलके सफेद कपड़े और ठंड में पतले गर्म कपड़े ठीक रहते हैं। ठंड में कान और पैर के तलुओं को सर्दी से बचाना चाहिये। इसका मतलब यह नहीं कि हर समय कनटोपा व मौजे पहिने ही रहा जाय। कुछ सहन शक्ति भी चाहिये, हां, ठंड के समय इनका उपयोग करना उचित है।



चोली का काम आंचलों को सहारा देना है।

फैशन की दूसरी देन है ऊंची एड़ी के जूते। इनका उपयोग इस दशा में कतई न किया जाय क्योंकि इनसे फिसल कर गिरने का अधिक डर रहता है और इस दशा में गिरना याने गर्भ-स्राव या गर्भपात (Miscarriage or abortion) को बुलावा देना है। <u>ऊंची एड़ी की जूती या चप्पल गर्भवती को भूलकर भी नहीं पहिनना चाहिये।</u>

४—दांत—खराब दांत होने से पाचन शक्ति बिगड़ जाती है। इस दशा में पाचन शक्ति वैसे ही गड़बड़ रहती है। दांतों की सफाई तो नित्यप्रति ही की जाती है पर फिर भी अब विशेष सावधानी बरतनी चाहिये। इसका महत्व अंग्रेजी की 'A tooth for a child' (हर बालक के लिये एक दांत) कहावत से पता चलता है। दांतों के लिये, गर्भ के लिए और स्वतः गर्भवती के लिये चूने की आवश्यकता रहती है इसीलिये इस समय चूने की अधिकता लिए हुए भोजन तत्व गर्भवती को और भी चाहिये। आजकल तो जल्दी पचने वाली चूने की गोलियां भी बाजार में मिलतीं है। अच्छे दांतों से ही तो भोजन अच्छी तरह चबाया जा सकता है जिससे पचने में आमाशय आदि को ज्यादा जोर नहीं पड़ता है।

५—भोजन—यह बड़े ही दुख की बात है कि हम अपने जीवन की सबसे अधिक जरूरी चीज 'भोजन' से बिलकुल अपरिचित है। डट के और कुछ भी खाने से 'भोजन' का मतलब हल नहीं होता। भोजन के विषय में नीचे लिखे तीन सत्य हमें हमेशा याद रखना चाहिये।

(१)—स्वास्थ्य रसोई घर में ही बनता व बिगड़ता है। इसका मतलब यह है कि हमारा भोजन हमारी पाचन शक्ति के ही अनुकूल चाहिये।

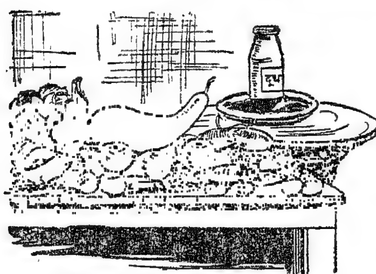
(२)—दवाई से अधिक उचित भोजन ही रोग का नाश करता है। हमारी बहुत सी बीमारियां भोजन की गड़बड़ी से ही हुआ करती है। भोजन में उचित परिवर्तन करने से रोग अपने आप ठीक हो जाते हैं।

(३)—भोजन के गुणों पर न कि भोजन की कीमत पर स्वास्थ्य निर्भर रहता है। दूध, दही और फल बाजार की मंहगी चाट व मिठाई से अधिक लाभप्रद होते हैं। उचित प्रकार से न बनी हुई चीजों में पोषण के बहुत से तत्व नष्ट हो जाते हैं।

इस सबका मतलब यह हुआ कि हमारा भोजन पौष्टिक व शीघ्र पचने वाला हो, उसमें जीवन तत्वों व पोषण के अन्य जरूरी पदार्थों का होना आवश्यक है। गर्भवती स्त्री के लिये तो ये बातें और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि उसके शरीर में एक और शरीर है और उसे भी इसी भोजन से बढ़ना है। वह केवल अपने लिये नहीं खाती उसे तो इसी भोजन से गर्भ को पालना पोसना है।



भोजन के तत्वों में नत्रजन पदार्थ (Proteins) शर्करा, (Carbohydrates), स्निग्ध तत्व (Fats), जीवन तत्व (Vitamins), खनिज तत्व (Minerals), मुख्य हैं। इस वैज्ञानिक विश्लेषण को समझने में साधारण व्यक्ति कठिनाई अनुभव करेगा इसलिये यहां इस पर अधिक जोर नहीं दिया जा रहा है। जीवन तत्व भोजन में बहुत ही थोड़ी मात्रा में पाये जाने वाले वे पदार्थ हैं जो शरीर के पोषण व पनपने में सहायक होते हैं। इनकी कमी से विशेष प्रकार के रोग हो जाते हैं। इसी प्रकार खनिज पदार्थों में लौह तत्व (Iron) का प्रमुख हाथ रहता है। परिशिष्ट में इन पर लिखा गया है।



पौष्टिक भोजन

अ. क्या खाना चाहिये ?—साधारणत: यदि भोजन में दिन भर में नीचे लिखी हुई चीजें हों तो गर्भवती को सभी आवश्यक चीजें मिल जावेंगी। उसे किसी किस्म की ताकत की दवा नहीं चाहना पड़ेगी।

गेहूँ	पाव भर	हरी भाजी	आध पाव
चांवल	आध पाव	अन्डे	२
दाल	आध पाव	अन्य भाजियें	आध पाव
घी	एक छटाक	शक्कर	एक छटाक
दूध	सेर भर	मसाले	आवश्यकतानुसार
फल	पाव भर	जल	पर्याप्त

इस भोजन में भूख और स्वाद के अनुसार रद्दोबदल की जा सकती है। इस सब का मतलब यह है कि भोजन में फल, भाजी, दूध व अनाज ही शरीर के पोषण के लिये सब तत्व दे देते हैं। शहद मुरब्बे और मलाई मक्खन से लाभदायक सिद्ध हुए हैं। हलका और ताकतवर भोजन ही लक्ष्य होना चाहिये। खजूर, बादाम, मूंगफली, शहद आदि का उपयोग लाभप्रद है पर इनके लिये फलों व दूध को कम करना ठीक नहीं है।

मांसाहार उचित नहीं है क्योंकि यह पेट में अम्लरस (Acidity) और अंतड़ियों में सड़ांध पैदा करता है जो इस हालत में हानिहारक है।

ब. कब और कितने बार खाना चाहिये ?—भोजन नियमित समय पर बहुत अच्छा रहता है, सबेरे थोड़ा नाश्ता जिसमें गरम दूध, अंडा, सूजी की डबलरोटी, मटर का रस आदि; दोपहर और रात्रि का पूरा खाना और सोते समय फिर दूध का एक

गिलास। समय पर खाया खाना पच जाता है और भूख भी अच्छी लगती है। समय-असमय खाना चटोरापन है और वह केवल मानसिक अस्थिरता की निशानी है।

स. क्या नहीं खाना चाहिये?—ऐसे आहार व पेय पदार्थों से बचना चाहिये जो कब्जियत करते हों। मैदे की डबल रोटी, बासी रोटी, उड़द व चने की दाल, कचालू (घुइयां), हलुवा, रबड़ी, खोया (मावा), सिंघाड़ा, अमरूद, तली हुई चीजें; मसालेदार व खटाई की चीजें आदि नुकसान करती हैं। चाय, काफी, कोको का इस्तेमाल नहीं करना चाहिये। यदि आदत हो तो इनमें दूध की मात्रा काफी बढ़ा दी जानी चाहिये। शराब का सेवन बिलकुल मना है।

मिट्टी खाना—यह एक दूसरी बुरी आदत है, इसे तो पागलपन ही कहना चाहिये। चूल्हे की मिट्टी, कोयले और न जाने कौन कौन सी मिट्टियां काली, चूने की, सफेद आदि खाई जातीं हैं। मिट्टी अंतड़ियों की दीवालों पर चिपक जाती है जिससे खाया-पिया पच नहीं पाता और इस प्रकार वह रक्त की कमी (Anaemia) पैदा कर गर्भवती व बच्चे को अशक्त बना देती है। छोटी इलायची, व पिपरमेंट की गोलियां आदि खाने से यह आदत छुड़ाई जा सकती है।

ड. पानी—साधारणतः भोजन के साथ थोड़ा पानी पीना ठीक है क्योंकि इससे आमाशय (Stomach) का अम्लरस (Acid) पतला नहीं पड़ पाता और जिससे वह भोजन आसानी व ठीक तरह से पचा सकता है। इसीलिये भोजन के डेढ़-दो घन्टे बाद पानी पीना उत्तम कहा गया है। इस नियम का पालन करना चाहिये। दिन में भी तीन चार गिलास पानी

पी लेना चाहिये इससे एक तो कब्जियत नहीं रहती और दूसरा पेशाब व पसीने के जरिये शरीर के दूषित पदार्थ निकल जाते हैं।

इ. उपवास—गर्भवती को तो पौष्टिक तत्वों की आवश्यकता है, उसे गर्भ को पालना है, उपवास उसके लिये कैसे ठीक हो सकता है ? वह तो उसे और दुर्बल करेगा। उसे दूध भी कम उतरेगा। धार्मिक उपवासों में दूध व फलाहार की आज्ञा रहती है अव्वल तो उपवास यदि रुकवा सकें जांय तो ठीक, नहीं तो शीघ्र पचने वाले फल व उनका रस और दूध से भोजन की पूर्ति की जानी चाहिये।

उ. अनुचित व असंतुलित भोजन से हानियां—सबसे पहिले तो खट्टे डकार आना, जी मचलाना, उल्टी होना ही शुरू होता है। कभी कभी दस्त लगने लग जाते हैं। बराबर अनपच बनी रहने से रक्त बराबर नहीं बन पाता जिसके कारण गर्भवती कमजोर होती जाती है, उसमें खून की कमी हो जाती है तथा बच्चा भी कमजोर पैदा होता है। चूने की कमी मां को ही कमजोर नहीं करती वरन् भावी शिशु के लिये सूखी (Rickets) का मार्ग बना देती है। इसी तरह भिन्न भिन्न तत्व अपना प्रभाव मां और बच्चे पर बतलाते हैं और यह स्वाभाविक भी है क्योंकि रक्त में की कमी तो दोनों में पाई जावेगी। बच्चों की यकृत की बीमारी (Infantile Cirrhosis) बड़ी घातक होती है। इसके बचाव के लिए गर्भवती को जीवनतत्व 'बी' के साथ मिश्रित 'मिथियोनिन कोलीन व आयनोसिटाल' (methionine choline & ionositol) लेना चाहिये। इस प्रकार भावी संतान इस दुष्ट रोग के खतरे से बचाई जा सकती है। उचित और

उपयुक्त भोजन में ये सारे पदार्थ मिलते हैं पर आजकल के जटिल जीवन में संतुलित भोजन की प्राप्ति भी एक समस्या है इसलिये हमें इन कथित औषधियों (भोजन के रसों–Extract of diets) की शरण लेनी पड़ती है।

६—कब्जियत—गर्भवती को अपनी आदत के अनुसार भोजन व नित्यकर्म करते रहना है। कब्जियत की उससे दुश्मनी है क्योंकि यह सड़ांध पैदा कर शरीर भर में जहर फैलाती है जिससे उसका जी तो मचलाता ही है पर साथ ही साथ उससे पूरा भोजन भी नहीं खाया जाता और वह दिन पर दिन कमजोर होती जाती है। यह स्थिति ठीक नहीं होती। इसे प्रथम तो पत्ती वाली भाजी खाकर और पानी अधिक पीकर दूर करना चाहिये। यदि आवश्यक हो और चिकित्सक सलाह दें तो 'ऐनिमा' (Enema) लिया जा सकता है। हलका जुलाब लिया जा सकता है पर तेज नहीं विशेष कर छठवें माह के पश्चात्। हलके दस्त लगाने के लिये पैराफिन लिक्विड एक औंस (Paraffin liquid) एक्सट्रेक्ट कैस्करा सैग्रेडा लिक्विड (Extract Cascara Sagrada liquid), गुलकंद, हर्र का चूर्ण, मुलहठी, ईसपगोल का शरबत आदि लिया जा सकता है।

७—वजन—अपने साधारण वजन से इस समय गर्भवती का हद से हद २० पौंड ही वजन बढ़ना चाहिये क्योंकि जितना अधिक वजन बढ़ेगा उतना ही अधिक गर्भवती के शरीर को काम करना पड़ेगा जिससे उसके हृदय व गुर्दों (Heart & Kidneys) पर भी अधिक जोर पड़ेगा। यह सब उसे तब करना पड़ेगा जब कि उसे आराम की विशेष आवश्यकता है। ज्यादा वजन बढ़ने से वह बराबर परिश्रम नहीं कर सकेगी जिससे उसे

बदहजमी होगी जो उसे और उसकी भावी संतान को हानिकारक है।

८—यौनिक जीवन—इसमें इतना भर कहना ठीक है कि सहवास गर्भ को नुकसान पहुँचा सकता है। जिन्हें गर्भस्राव व गर्भपात होते हों उन्हें तो भूल कर भी इसमें लिप्त नहीं होना चाहिये। स्त्री-पुरुष सम्बन्ध आत्मीयता से रहा करते हैं। भोग का जीवन में स्थान है पर विलासिता का नहीं। साधारणतः तीन महिने तक तो साधारण तौर से और फिर बहुत ही साधारण तौर से केवल पुरुष की तुष्टि हेतु, और यदा कदा छठे माह तक सहवास हो सकता है। इसके बाद तो केवल नाम-मात्र को ही यह होता है। सच तो यह है कि इससे जितना भी बचा जाय उतना अच्छा है इसीलिये हमारी भारतीय संस्कृति तो इसकी बिलकुल अनुमति ही नहीं देती।

९—जांच—कुछ बातें ऐसी हुआ करती हैं जो आम जनता पहिचान नहीं सकती और ठीक भी है यह काम तो चिकित्सक का है। चिकित्सक आपका सलाहकार मित्र, साथी ही नहीं है वह तो परिवार का और विशेषकर इस समय आपके और आपके शिशु के स्वास्थ्य का बीमा एजंट है। उसे तो आपको अपने घर का एक सदस्य ही समझना चाहिये। उसके नाम के साथ भय, उससे झिझक आदि रखने में आप ही का नुकसान है और वह भी तब जब कि आपको (इस अवस्था में) अपना और अपने गर्भ के बालक का ध्यान रखना है। कुशल दाई व चिकित्सक तो एक वरदान हैं, आपके सबसे अधिक सहायक हैं क्योंकि इनकी प्रसवाग्र जांच व देखभाल व सलाह आपकी बहुत सी ही नहीं प्रायः सभी कठिनाइयों व दुर्घटनाओं से रक्षा करती हैं। यद्यपि

बहुत सी गर्भवती स्त्रियों को विशेष कष्ट नहीं होता और उनकी जचकी सकुशल हो जाती है फिर भी हमारा देश प्रति १००० जचकियों के समय २० माताएं और १५० शिशु खो देता है। देश को तो जन, धन व कार्यशक्ति की हानि होती ही है पर पारिवारिक नुकसान बहुत अधिक होता है। यदि उचित जांच व देखभाल की जाती तो इनमें से बहुतों के प्राण बच जाते और साथ ही जो बहुत से कमजोर बच्चे पैदा होते हैं वे भी स्वस्थ पैदा होते।

यदि आपका किसी चिकित्सक से परिचय नहीं है तो आप सूतिकागृह व शिशु संगोपन केन्द्र (maternity home or Child welfare centre) में सलाह लेने जा सकतीं हैं। इन संस्थाओं की देखरेख स्त्रियां ही किया करती हैं जिससे कि गर्भवती अपनी बातें बताने में लज्जा व झिझक अनुभव न करें तथा बिना किसी हिचकिचाहट के पूरी जांच करा सकें। पहिले से ही जांच की जानकारी होने से गर्भवती चिकित्सक के प्रश्नों को अच्छी तरह समझ उसका ठीक ठीक उत्तर दे सकती है तथा जांच में भी पूरा पूरा सहयोग दे सकती है। यह गर्भवती के ही लाभ की बात है और यही इस पुस्तक का ध्येय है।

अ. कौटुम्बिक स्वास्थ्य—इसमें चिकित्सक गर्भवती के पति व पितृगृह से संबंधित रोगों के विषय में जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न करता है कि जिससे वह गर्भवती व उसके होने वाले बच्चे को इन दोनों ओर की सम्भावित कमजोरियों से बचा सके।

ब. अन्य पुराने रोग—वंश परिचय या कुटुम्ब की जानकारी के बाद चिकित्सक यह जानने की चेष्टा करता है कि गर्भ-

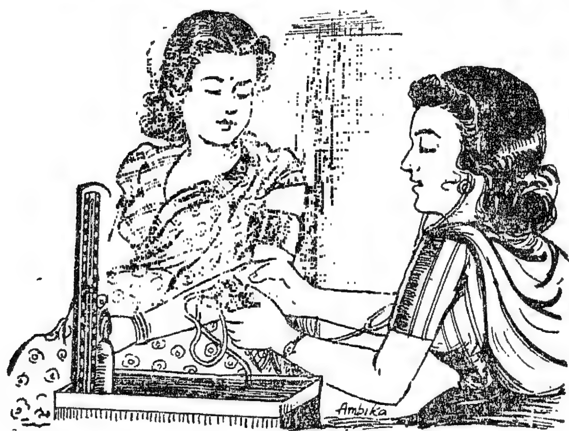
वती को तो कोई खास बीमारी नहीं हुई थी क्योंकि कई रोग शरीर पर अमिट छाप छोड़ जाते हैं व कई रोग अधूरे इलाज के कारण शरीर में दबे पड़े रहते हैं और गर्भावस्था में पनपने के बाद प्रसवोपरांत (जचकी के बाद) माता को अपाहज ही नहीं करते वरन् कभी कभी उसके प्राण भी ले लेते हैं। इनमें गठिया, मधुमेह, गुर्दे के रोग, हृदय के रोग व क्षय प्रमुख हैं। उपदंश का अधूरा इलाज गर्भपात का कारण हो जाता है और यदि इस अवस्था में पूरा इलाज करा लिया जाय तो भी जचकी सकुशल हो सकती है और गर्भपात रोका जा सकता है। कभी कभी जचकी तो कुशलतापूर्वक ठीक तरह से निपट जाती है पर शिशु के ऊपर रोग का प्रभाव हो जाता है। यदि वे रोग शुरू की हालत में होते हैं तो चिकित्सक इनका इलाज करता हुआ बहुत ही सावधानी से जचकी कराता है और बाद में भी जच्चा की देखभाल में बड़ी होशियारी बरतता है। यदि ये बीमारियां बेकाबू हुई होती हैं और जचकी के बाद माता के स्वास्थ्य को जरा भी भय रहता है तो वह वैधानिक (कानून के द्वारा मान्य) गर्भपात की सलाह देता है।

योनि मार्ग के रोग—विशेषकर सुज़ाक नवजात शिशु के निकलते समय उसकी आंखें खराब कर देता है। वे बहुत तेजी से दुखनी आ जाती हैं। इससे बच्चे के अंधे हो जाने का भय रहता है।

स. शरीर परीक्षण—कहा जा चुका है कि कभी कभी कई रोग दबे पड़े रहते हैं या अनभिज्ञतावश गर्भवती इनके विषय में कुछ भी नहीं समझती। ऐसी दशा में चिकित्सक का कर्तव्य है कि गर्भवती की बारीकी से जांच करे। शक होने पर वह नीचे बताये हुए अन्य साधनों की भी शरण लेता है।

(क) मूत्र परीक्षा—मल-मूत्र के द्वारा शरीर दूषित पदार्थ निकाला करता है। इस समय जब अंग प्रत्यंग को अधिक काम करना पड़ता है तब दूषित पदार्थ अधिक बनने लगते हैं जिन्हें गुर्दा विषेश पदार्थों के रूप में पेशाब के द्वारा बाहर फेंक देता है और ये पेशाब की जांच द्वारा पहिचाने जा सकते हैं। बिशेष कर एल्बुमिन, कास्टस व शक्कर (Albumin, Casts & Sugar) के लिये पेशाब की जांच आवश्यक है। इनके मिलने पर चिकित्सक की सलाह मानना आपका कर्तव्य है।

(ख) रक्त चाप—कभी कभी रक्त चाप का दबाव इस हालत में बढ़ जाता है। इसकी जांच हाथ में एक पट्टा लगाकर



रक्त चाप लेने की तैयारी

की जाती है। पट्टे में हवा भरी जाती है और बांह की खून की नली पर दबाव पड़ता है जिससे हाथ थोड़ा सा भारी मालूम पड़ता है (केवल दबाव के कारण) फिर पट्टे की हवा निकाली जाती है और चिकित्सक पट्टे से जुड़े हुए यंत्र में पारे की उंचाई

देखता हुआ कुहनी के गड्ढे के पास स्टेथसकोप से कुछ आवाजें सुनता जाता है। इस प्रकार थोड़ी देर में ही वह रक्त के दबाव का निश्चय कर लेता है। इस जांच में बिलकुल कष्ट नहीं होता।

(ग) खून की जांच—वह रोग की संभावना के अनुसार उंगली व कुहनी के गड्ढे की खून की नली में से खून लेता है। इसमें डर की कोई बात नहीं है।

(घ) एक्स-रे—शक होने पर वह आपकी छाती का क्ष-किरण से भी जांच करेगा। क्षय रोग का जल्दी मालूम हो जाना रोगी के लाभ की ही बात है। दूसरे रोगों में भी कभी कभी इस जांच की जरूरत रहती है।

इस प्रकार अनेक साधनों से वह आपके अन्दर की बीमारियों के जानने की कोशिश करता है जिससे कि कोई भी बीमारी आपको या आपके शिशु को नुकसान न पहुँचा सके। यहां पर चेतावनी देना आवश्यक है कि पेशाब में एल्बुमिन का मिलना व रक्त चाप का बढ़ना इस बात का इशारा है कि गर्भवती को किसी भी समय गर्भिण्यपस्मार व गर्भवात (Eclampsia) होने का डर है। यह रोग बहुत ही भयानक रोग होता है। इसमें फिट पर फिट आते हैं, पैरों पर सूजन आ जाती है, बुखार बढ़ जाता है और जरा सी लापरवाही से गर्भवती की जान जा सकती है। यदि सावधानी रखी जाय तो यह रोग गर्भवती से कोसों दूर भागता है।

(ङ) कूल्हे की हड्डियां—कूल्हे की हड्डियों के बीच की जगह को वस्तिगह्वर (Pelvic cavity) कहते हैं। जचकी

के लिहाज से इनकी बनावट और इनके बीच की जगह बहुत ही महत्त्वपूर्ण है क्योंकि गर्भ के निकलने के रास्ते का अर्थात् योनि मार्ग का बड़ा या छोटा होना इसी पर निर्भर है। विशेष नापों से सकरेपन का अन्दाज हो जाता है और यह अन्दाज लगाया जा सकता है कि योनिद्वार से बच्चा बाहर आ सकेगा कि नहीं। जब सकरेपन के कारण यह पक्का हो जाता है कि साधारण तौर से जचकी नहीं हो सकती तब पेट का आपरेशन कर बच्चा निकाला जाता है। ऐसे तीन आपरेशन कराये जा सकते हैं। इसके बाद पेट की मांस-पेशियां बहुत कमजोर हो जाती हैं और स्त्री को गर्भवती होने का खतरा कभी भी नहीं उठाना चाहिये। ऐसी सकरे कूल्हे वाली स्त्रियों को चाहिये कि वे संतति निग्रहियों अर्थात् बच्चा न होने के बचाव के साधनों † (Contraceptives) का उपयोग करें जिससे कि वे आपरेशन के खतरे से बची रहें क्योंकि ऐन मौके पर आपरेशन करने वाला चिकित्सक न मिला तो बच्चे को काट काट कर योनि द्वार से निकालना पड़ता है पर यह भी तो सब नहीं कर सकते।

इससे इन हड्डियों के नाप ले लेना बहुत ही आवश्यक है शायद यह पढ़ कर बहुत सी स्त्रियां घबड़ा जांय पर घबराने की कोई बात नहीं है क्योंकि ५ प्रतिशत से भी कम स्त्रियों में ही वस्तिगव्हर व प्रसव मार्ग के सकरे होने का डर रहता है।

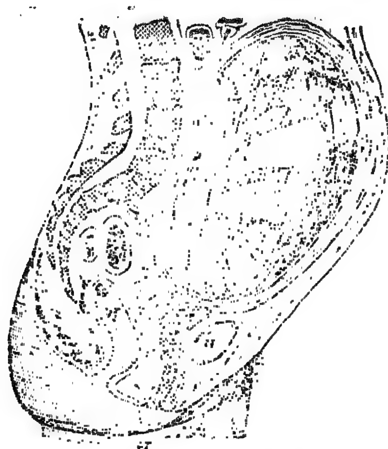
(ट) यौनिक जांच— बहुतसी स्त्रियों के लिये यह नई किस्म की जांच होती है। वे इसके नाम से डर जाती हैं। इसमें

---

† इस विषय पर हमारे यहां से प्रकाशित, अखिल भारतीय कौटुम्बिक नियोजन समिति द्वारा मान्य संन्तति निग्रह क्यों और कैसे ?' पढ़िये। प्रकाशक—

डर की कोई बात नहीं है। चिकित्सक इसमें रबर के दस्ताने पहिनकर उंगलियों से योनि मार्ग का परीक्षण करता है। कभी कभी अच्छी तरह देखने के लिये योनि मार्ग को फैलाना पड़ता है और उसके लिये स्पैकुलम नाम का औजार यौनि मार्ग में डाला है। भगोष्ठों को भी खोलकर देखा जाता है। इस तरह ग्रीवा की कोमलता की पहिचान से वह गर्भ के ठहरने का पहिले दो महीनों में ही निश्चय करता है। साथ ही योनिमार्ग में हुई फुन्सियों, जो कि कई समय गर्भवती को भी नहीं मालूम रहती, का भी पता चल जाता है। गर्भाशय की स्थिति का पता भी चलता है। इस समय यदि आपको यौनिक स्वच्छता का ज्ञान नहीं होगा तो वह आपको उसके विषय में भी बतावेगा। आपको केवल एक बात करना होगी और वह यह कि आप अपने शरीर को बिलकुल ढीला रखें। शरीर ढीला रखने में आपको जांच के समय कोई कष्ट न होगा। कभी कभी बच्चा गर्भाशय में न रह डिम्ब नलिका में पनपा करता है। यह एक खतरनाक बात होती है। इसे नलिका गर्भ कहते हैं। यौनिक जांच से इसका भी पता लगाया जा सकता है।

ङ. गर्भस्थ शिशु की जांच—छठवें माह से वह पेट की बढ़ती पर भी ध्यान देता है, साथ ही गर्भस्थ बालक के आकार, बाढ़, स्थिति व हृदय धड़कन की भी जांच करता है। छठे माह तक तो गर्भाशय बढ़ता है और फिर उसकी दीवालें पतली पड़कर ही बढ़ती हैं जिससे कि बढ़ता हुआ गर्भ व गर्भोदक (amniotic fluid) की थैली को पूरी जगह मिल सके। नवें माह में बालक की स्थिति जानने के लिये गुदा द्वार में उंगली डालकर जांच की जा सकती है। इस समय भी शरीर को ढीला छोड़ना चाहिये।



पूर्ण गर्भ
अ—अंतड़ियां,
य—योनि,
भ—भगास्थि,
म—मलाशय,
(भगास्थि और योनि के बीच मूत्राशय है।)
गर्भ के बाढ़ से मूत्राशय, अंतड़ियों व मलाशय पर दबाव पड़ता है।

इ. वजन लेना—यह बार बार लिखा जाता है कि जिससे अनुचित बढ़ती का या वजन के कम होने का जल्दी पता चल सके। जैसा बताया जा चुका है कि अधिक वजन बढ़ने से हृदय व गुर्दों पर जोर अधिक पड़ता है जो गर्भवती के हक में ठीक नहीं है। उसके कमजोर में भी उसकी भलाई ठीक नहीं है।

उ. प्रसव की तिथि बतलाना—यदि गर्भवती अपनी आखिरी माहवारी की तारीख जानती है तो चिकित्सक उसे हिसाब लगाकर जचकी का दिन भी बतला सकता है। इसमें कभी कभी पन्द्रह दिनों तक का भी अन्तर पड़ सकता है। इस दिन के मालूम हो जाने से जचकी की तैयारी की जा सकती है तथा इसके दो माह पहिले से ही मोटर, टांगे व रेलगाड़ी आदि की सवारी भी रोकी जा सकती है क्योंकि इनमें झटके लगने का भी डर रहता है जिससे गर्भपात हो सकता है।

प्रसव तिथि परिशिष्ट में दी हुई तालिका से भी जानी जा सकती है। इसमें आखिरी माहवारी के प्रथम दिन में अर्थात् पहिले

कालम की तारीख में तीसरे कालम की संख्या जोड़ने से जो चौथे कालम में दिखलायी हुई तारीख निकलती है वही प्रसव के होने की संभावित तिथि रहती है।

चेतावनी—इतना सब कुछ लिखने का तात्पर्य यह है कि चिकित्सक की जांच, सलाह व सहयोग बहुत ही उपयोगी है और इसका पूरा पूरा लाभ उठाना चाहिये। समय, सुविधा, सहयोग और उचित प्रबंध हो तो पहिले छह माह में हर तीन-तीन सप्ताह, सातवें और आठवें माह में हर पन्द्रहवें दिन और फिर प्रसव तक हर सप्ताह गर्भवती को चिकित्सक के पास जाना चाहिये। इस समय की उसकी जांच पर ही गर्भवती और शिशु का ही नहीं देश का स्वास्थ्य निर्भर रहता है।

हमारे यहां बहुत से स्थान ऐसे हैं जहां कि शिक्षित दाइयों की भी पहुँच नहीं है। आम जनता इस विषय से बिल्कुल अनभिज्ञ है। प्रसवाग्र देखभाल का महत्व उसे बिलकुल नहीं मालूम। ऐसी जगहों पर चिकित्सक द्वारा जांच की क्या सुविधा हो ककती है? फिर भी गर्भवती को धीरज रखना चाहिये और निम्नलिखित बातों के दिखते ही सचेत हो जाना चाहिये।

१. पेशाब का जल्दी जल्दी होना। यह लक्षण मधुमेह में होता है पर गर्भावस्था के अन्तिम दिनों में बढ़े हुए गर्भाशय का दबाव मूत्राशय पर पड़ने से यह आम तौर से हुआ करता है। पेशाब का कम आना भी ठीक नहीं है।

२. पैरों पर या मुंह पर सूजन होना। आखिरी महिने में थोड़ी बहुत सूजन पैरों पर आ जाती है, आराम करने से यह मिट जाती है पर यदि यह सूजन रही आय तो पेशाब की जांच

करवा लेना चाहिये। चिकित्सक की सलाह जल्दी से जल्दी लेना चाहिये।

३. खून की कमी होना—इसमें शरीर ललामी के बदले पीलापन (निस्तेज) और नाखून गुलाबी के बदले सफेदी सी लिये होते हैं। जचकी के बाद इन स्त्रियों को बहुत अधिक कमजोरी हो जाती है। हर पांचवीं जच्चा को खून की कमी हो जाया करती है इसलिए हर गर्भवती को इस ओर से सतर्क रहना चाहिए।

४. जरा सा चलने पर सांस चलना व खांसी का बना रहना। हो सकता है ऐसी स्त्रियां हृदय रोग से या क्षय से पीड़ित हों पर कभी कभी केवल कमजोरी से भी ऐसा हुआ करता है।

५. यौनिक रोगों का होना—इसमें उपदंश व सुजाक मुख्य हैं। किसी भी किस्म के योनि द्वार से अधिक पानी बहने को व पेशाब की जलन को टालना ठीक नहीं है। इसका बच्चे पर बुरा असर पड़ता है। परिशिष्ट भी देखिये। आजकल इन रोगों की सफल चिकित्सा होती है।

६. पेट में बच्चे के हिलने डुलने के विषय में लिखा जा चुका है यदि वह एकाएक बन्द हो जाय तो चिकित्सक को फौरन खबर देना चाहिए।

७. कभी कभी पेट में नीचे की तरफ दर्द रहता है। यह एक बाजू हुआ करता है। इसमें दर्द आते हैं और जाते हैं। हो



नालिका गर्भ
नलिका गर्भ के फैलाव से नलिका का फट जाना

सकता है कि गर्भ डिम्ब नालिका में हो अर्थात् नलिका-गर्भ हो अथवा यदि दायें तरफ़ दर्द है तो संभव है कि आंत्रपुच्छ (Appendix) में सूजन आ गई हो इस दर्द को लज्जा के कारण छिपा न रखना चाहिए क्यों कि यदि परवाह नहीं की गई तो गर्भ के बढ़ने से नलिका फट जाती है और शरीर के अन्दर ही खून बहने लग जाता है। यदि आंत्रपुच्छ की सूजन हुई तो भी ठीक नहीं है। दोनों अवस्थाओं में जान को खतरा रहता है। पहिले में कहा गया है कि प्रसवाग्र देखभाल दो बातों में बांटी जाती है [१] गर्भवती की देखभाल [२] शिशु के लिये तैयारी।

शिशु के लिये तैयारी—

क्या कोई पहले पहल होनेवाली माता की उस खुशी का अन्दाज लगा सकता है जो उसे अपने आने वाले शिशु के कपड़े तैयार करते समय हुआ करती है? वह हर टांके में अपना चाव, दुलार, प्रेम ही गुथती है। शिशु के कपड़ों का नरम व गरम होना बहुत जरूरी है क्योंकि कपड़ों का सबसे अधिक काम तो शिशु की गर्मी को बनाये रखना है। बहुत गरमी में तो पतले मलमल के कपड़े व सर्दियों में फलालेन, लिंट (रुईनुमा कपड़ा) व सर्ज (पतला व गर्म कपड़ा) के होना चाहिये। स्थिति के अनुसार रेशम के भी कपड़े बनवाये जा सकते हैं। कपड़े बनाते समय मौसम का हमेशा ध्यान रखा जाय।

पहिले पहल तो कुछ कपड़े तीन माह तक के लिये और कुछ जरा बड़े नाप के तैयार करने पड़ते हैं पैदा होते समय नाड़ू की पट्टी आदि का भी प्रबन्ध कर लेना चाहिये नहीं तो दाई उसी समय जल्दी में कोई भी कपड़ा फाड़ डालती है।

[१] नाड़ू की पट्टी--यह फलालेन व लिंट का १८"×६" की पट्टी रहती है। ये चार चाहिये।

[२] शिशु को लपेटने के लिये--पहिले पहल कुछ दिनों तक को शिशु को लपेट कर ही रखते हैं। इसके लिये मौसम के अनुसार २४"×३६" के चार कपड़े चाहिये। वैसे झबला आदि भी पहनाया जा सकता है।

[३] झबले--ये बिना बांह के आगे पीछे एक से सादे फराक से रहते हैं। यह छह चाहिये। इसमें कसापन नहीं रहता। इसमें कढ़ाई नहीं चाहिये नहीं तो यह शिशु के नरम चमड़े में गड़ेगी। ये सफेद रंग के हों क्योंकि कभी कभी तेज रंग शिशु को सहन नहीं होता और उसके छोटी छोटी पिरकियां (सुई की नोक के बराबर दाने (Measli form rashes) सी निकल आती हैं।

[४] कनटोपा — गरम व सादे — दो, दो ।

[५] मोजे — गरम व सादे — चार, चार ।

[६] बड़ी फराकें व कमीजें — छह, इनकी बाहों में कलाई के पास बटन व सरफूंद गांठ लगाने का इन्तजाम चाहिये जिससे ठंड के दिनों में बाहों को कलाई के पास बंद किया जा सके। फैशन व समाज के दिखावे के फेर में कपड़े बनाते समय बच्चे की सुविधा को नहीं भूलना चाहिये।

[७] लारिया या बिब — लार गिरने से कपड़े खराब हो जाते हैं इसलिये इससे बचाने के लिये तनी लगे हुए लिंट या और कोई भी कुछ मोटे व नरम कपड़े के ५" × ४" वाले छह टुकड़े बनाये जा सकते हैं। तनियों की गठानें गले के पीछे हों व इतना ध्यान रखा जाय कि गठान कसी हुई न हो। लिंट व मोटे कपड़े के होने से ये लार को सोख लेते हैं और इस तरह फराक को गंदी होने से बचाते हैं।

[८] तौलिया — नहलाने के बाद पोंछने के लिये १२" × १८" के चार तौलिये। दो बड़े रुएंदार तौलिये (Turkish) अलग से भी रखे जा सकते हैं।

[९] रूमाल — बच्चे के नाक मुंह पोंछने के लिये कुछ नरम रूमाल भी अलग से चाहिये।

[१०] फाल्के या पोतड़े — ये सबसे जरूरी हैं। २७" वर्ग के नरम कपड़ों की दुहरी तिकोनी पट्टियों से ये बनाये जाते हैं। ये २४ से ४८ तक होना चाहिये। बरसात में इनकी अधिक आवश्यकता पड़ती है क्योंकि पेशाब से जैसे ही ये गीले हुए कि वैसे ही इन्हें बदलना पड़ता है। इनके गीले रहने से बच्चे का कोमल चमड़ा लाल पड़ जाता है व गल जाता है। इससे उसे बहुत कष्ट होता है। कभी कभी लापरवाही से बड़े बड़े घाव भी होते देखे गये हैं।

११ बिस्तरा :—

[अ] तकिये—शिशु के सिर के आजू बाजू जरा तिरछे से रखने के लिये जिससे उसका सिर सधा रहे। दो तकिये

१०"×४३/४" के नाप के चाहिये। हर तकिये के दो गिलाफ़ चाहिये।

(ब) चादरें— ये मामूली चादरों, साफ धोतियों, लिंट, फलालेन आदि से बनाई जा सकतीं हैं। १८"×२४" के नाप की ६ से १२ हों तो इन्हें साफ रखने व बदलने में सुविधा रहती है।

(स) गद्दी— चादरों को नरम व गरम रखने के लिये इसी नाप की एक हलकी सी रुई की गद्दी बनाई जा सकती है। फटे कपड़ों को जमाकर एक सा मोटा रखते हुए भी गद्दी सी बनाते हैं। इसके ऊपर गिलाफ चढ़ा देते हैं। इसे कथड़ी कहा जाता है। ये दो होना चाहिये।

(ड) रबड़ का टुकड़ा— इसे मैकिन्टोश (Mackintosh) कहते हैं। यह भी चादर के नाप का या कुछ बड़ा होना चाहिये। गद्दी के ऊपर और चादर के नीचे यह बिछाया जाता है। इससे गद्दी गीली नहीं होती है। चादर तो जल्दी सुखाई जा सकती है पर गद्दी सूखने में देर लगती है। ये भी दो रहें तो अच्छा है।

(इ) ओढ़ने के लिये—मौसम के अनुसार चादर, पतली रजाई-हल्का कम्बल व कथड़ी १८"×२४" के नाप के दो से चार चाहिये।

(१२) पालना—यह छोटे से झूले, खाट, चौखुटी टोकनी व मामूली बड़ी गोल टोकनी के रूप में हो सकता है। गुजराती घरों का झूला बहुत ही हल्का होता है। इसमें बच्चे के लिटाने के लिये कपड़े का उपयोग किया जाता है पर इसमें एक दोष रहता है वह यह

कि यदि पीठ के नीचे कपड़े नहीं रखे गये तो बच्चे की कमर मुड़ जाती है। किसी भी तरह का पलंग व झूला हो पर उसमें खिलौने टांगने का प्रबंध होना चाहिये। यदि खाट नुमा हो तो चारों ओर छोटी जाफरी लगी होनी चाहिये जिससे शिशु अनजाने में उस पर से लुड़क कर नीचे न आ पड़े। जाफरी लगी रहने से खाट आसानी से उठायी भी जा सकती है पर यदि चौखुटी टोकनी हो तो उसमें हैंडल लगवा लेना चाहिये। इस तरह शिशु को एक कमरे से दूसरे कमरे में ले जाने के लिये गोद में बार बार उठाना नहीं पड़ेगा।

गर्भवती की कुछ विशेष तकलीफें और उनसे बचने के उपाय

वैसे इन पर लिख दिया गया है पर गर्भबती की हालत देखते हुए इन चीजों को जितना भी दुहराया जाय उतना ही कम है। यह बतलाया जा चुका है कि हर गर्भवती को कष्ट नहीं होता और जिनको होता है उन्हें भी इतना नहीं होता कि दवा करनी पड़े और फिर सावधानी रखने से तो यह और भी कम होता है। आम धारणा है कि ऐसी दशा में इलाज नहीं कराया जाता। यह गलत है, सावधानी की आवश्यकता है कि कहीं कोई ऐसी दवा धोखे में न दे दी जाय जिससे गर्भपात हो जाय। यदि दवा नहीं कराई जाती तो तकलीफ भुगतते भुगतते ही गर्भवती बहुत कमज़ोर ही नहीं वरन् मरणासन्न भी हो सकती है।

१. जी मचलाना—यह अक्सर पहिले तीन माह में ही होता है पर किसी किसी को तो यह कष्ट आखिरी माह तक बना रहता है। इसमें सबेरे सबेरे जी मचलाता है और कभी कभी उल्टी भी होती है। ऐसी दशा में बिस्तर से उठने के पूर्व ही थोड़ा सा खा लेना चाहिये और बहुत धीरे धीरे उठना चाहिये।

बर्फ चूसना और फलों का बिलकुल ठंडा रस लेना इसमें लाभ-दायक होता है। जीवन तत्व 'बी ६' और 'एवोमिन' (मे एन्ड बेकर) की गोलियां इसे रोकने में सहायक होती हैं। दवाइयां चिकित्सक की सलाह से लेना चाहिये।

२. पेट का जलना (दाह) या खट्टे डकार आना—यह आमाशय में अम्लता बतलाता है। इसे ठंडा भोजन (बासा नहीं), आराम, व खाने का सोडा शांत करता है। यदि गर्भवती मांस खा रही हो तो उसे बिलकुल बंद कर देना चाहिये। खटाई, तली हुई चीजें, तेज मसाले, तेज चाय से दूर रहना चाहिये।

३. एंठन व हलका दर्द—यह आखिरी महीनों में होते हैं। हलकी मालिश व ठंडे व गर्म पानी के बारी बारी फेरने से आराम मिलता है।

४. पैरों में सूजन—जैसा बताया गया है यह दबाव के कारण होती है। आराम करने से यह न जावे तो चिकित्सक से सलाह लेना और पेशाब की जांच कराना चाहिये।

५. कब्जियत—जैसे जैसे गर्भ बढ़ता जाता है वैसे वैसे अंतड़ियों को कम जगह मिलती है और वे दबती हैं जिससे कब्जियत होती है। इसे हटाने के लिये पानी का, पत्तेदार भाजी का सेवन सफल होता है। तेज जुलाब नहीं लेना चाहिये। हां, हलका वाला जुलाब और खास कर एक्सट्रैक्ट कैस्कैरा सैग्रेडा लिक्विड व पैराफिन लिक्विड लिया जा सकता है।

६. बार बार पेशाब आना—अधिकतर यह तकलीफ आखिरी माह में हुआ करती है इसका कारण बढ़ते हुए गर्भाशय

का मूत्राशय पर दबाव ही है। इसमें पानी पीने की मिगदार कम कर देना चाहिये। यदि फिर भी तकलीफ सहन न हो या जलन हो तो पेशाब की जांच करवा लेना चाहिये क्योंकि कभी किसी कीटाणु के कारण या पेशाब में यूरिक एसिड के कारण भी यह कष्ट हो जाता है।

७. गर्भस्राव व गर्भ पात--यह एक अलग ही तकलीफ है और इसे बीमारी ही गिनना चाहिये। किन्हीं किन्हीं अवसरों पर स्वतः चिकित्सक इसकी राय देते हैं और ऐसे गर्भपात को वैधानिक गर्भपात कहा जाता है। हृदय व वृक्क (गुर्दे) के रोग, मधुमेह, क्षय (Tuberculosis), सकरा वस्ति गह्वर, बहुत अधिक कमजोरी आदि मुख्य कारणों के होते हुए और माता के स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए इसकी राय दी जाती है।

किसी किसी अवस्था में यह खुद व खुद हो जाता है इसके मुख्य कारण उपदंश आर. एच फैक्टर (R.H. Factor) अधिक सहवास, तीव्र मानसिक उद्वेग, तेज ज्वर, चोट, जीवन तत्व 'ई' मय डिम्ब के विशेष ग्रन्थिरस (Projesterone) की कमी, कुछ औषधियां व तेज जुलाबादि हैं।

लक्षण—पेड़ू के पास पीड़ा, घबराहट, कमजोरी होना, योनि द्वार में खून के धब्बे लगना या वहां से खून का बहना। इसके बाद गर्भ गिर जाता है। यदि गर्भ ठीक तरह से पूरा पूरा गिर जाता है तो तो ठीक, नहीं तो रक्त चालू रहता है।

जब ये लक्षण गर्भावस्था के प्रथम चार माह में होते हैं तो गर्भस्राव (miscarriage) कहा जाता है पर बाद में गर्भपात (Abortion) कहलाता है। यह अधिकतर उन दिनों में होता है

जब कि सामान्यतः मासिक धर्म होने की तिथि होती है। इन्हीं दिनों गर्भवती को कुछ कष्ट भी होता है और किसी किसी को खून के एक दो धब्बे भी पड़ते हैं इसलिये गर्भवती को इन दिनों में विशेष आराम करना चाहिये और विशेष कर उन स्त्रियों को जिन्हें पहिले गर्भपात होते रहे हों। इन्हें इन अवसरों पर बहुत जल्दी चलना, दौड़ना भारी चीजों की उठा पटक से बचना चाहिए और साथ ही जरा सी तकलीफ पर चिकित्सक को बुलवा भेजना चाहिये। जब तक चिकित्सक न आये तब तक घर वालों को नीचे लिखी बातों पर अमल करना चाहिये।

(१) घबराना नहीं चाहिये।

(२) यदि चिकित्सक के आने में देर है तो दर्द की जानी पहिचानी औषधि दे दो इससे दर्द कम हो जाने से गर्भवती शांत रहेगी। सन्देह वाली कोई भी दवा मत दो।

(३) गर्भिणी को समझाओ। उसे आराम से लिटा दो और खाट का पायतान उठा दो।

(४) पेट के निचले भाग पर बर्फ या ठंडे पानी की पट्टी रखो।

(५) जुलाब मत दो।

(६) यदि रक्त बहुत बह रहा हो तो अधिक कमजोरी से बचाने के लिये दूध, हलका पतला शीघ्र पचनेवाला भोजन दे देना चाहिये। स्टरलाइज्ड गाज (Sterlized guage) व धोबी के धुले पतले कपड़े की पट्टियां योनि मार्ग में पूर्ण सफाई के साथ भरी जा सकती हैं। इन धोबी के धुले कपड़े की पट्टियों को जरा गरम करके ठंडा कर लिया जाय तो उत्तम होगा। यदि यह न बन सके तो जैसी मासिक धर्म के समय देख रेख की जाती है वैसी ही पूर्ण सफाई के साथ इस समय भी देखरेख करना चाहिये।

यदि गर्भपात अधूरा हुआ हो तो चिकित्सक एक मामूली आपरेशन की सलाह देगा। इसे अवश्य करा लेना चाहिये। इसमें देखरेख बिलकुल जचकी के समय सरीखी बल्कि उससे भी अधिक सावधानी से होनी चाहिये।

प्रसवाग्र देखभाल में जच्चा–बच्चा का स्वास्थ्य व परिवार का सुख ही नहीं वरन् मानव जाति का उत्कर्ष छिपा हुआ रहता है इसलिये हर सास व ससुर में यह कहने की हिम्मत होनी चाहिये कि उनने बहू की देखभाल में कोई ढील व भूल नहीं की।

प्रसव की तैयारी

जैसे जैसे दिन खिसकते जाते हैं और जचकी की बतलाई हुई तारीख नजदीक आती जाती है घर वालों की खुशी और बेकरारी बढ़ती जाती है। गर्भवती एक ओर तो अपने शिशु के लिए तैयारी करती है और दूसरी ओर उस समय की फिकर भी करती जाती है। मध्यम वर्ग के लिये तो यह समय परीक्षा का ही होता है और विशेष कर उन बेचारों को जो या तो घर से, रिश्ते-दार से दूर हैं या किसी कारणवश अपने आपको अकेला महसूस करते हैं। इनकी सहायता के लिये तो केवल जच्चा अस्पताल व सूतिका गृह (जो नगण्य हैं) ही ठीक रहते हैं।

जचकी कहां ?—जचकी कोई ऐसा काम तो नहीं है कि बस घंटे दो घंटे तकलीफ हुई और सब काम पहिले की तरह शुरू हो जाय। इसमें सब प्रकार की सुविधा, घर का प्रबन्ध, उस समय की दौड़ धूप आदि सब का ध्यान रखना पड़ता है। यदि सब कुछ ठीक है और ऐन मौके पर कोई अड़चन न पड़ी फिर तो ठीक नहीं तो उस समय की चिन्ता और मुसीबत का अन्दाज वही लगा सकता है जिसे वह मुसीबत उठानी पड़ी हो। समय पर चिकित्सिका नहीं मिलती, तो कभी कोई चीज मांगी जा रही है तो कभी कोई और फिर जचकी के बाद थका हारा आदमी जच्चा को देखे, बच्चे को देखे या घर को संभाले।

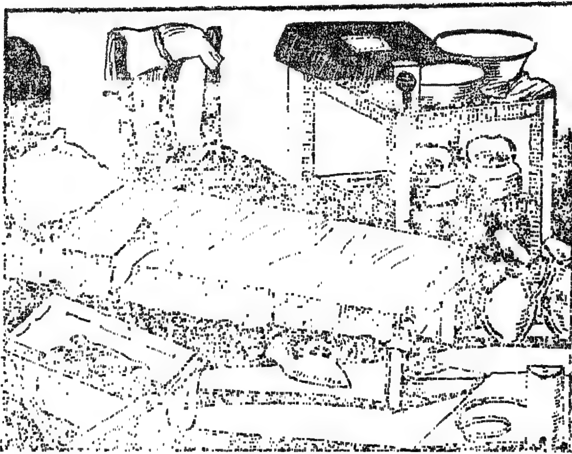
पहिली जचकी तो मातृ-गृह में ही ठीक रहती है क्योंकि नई-नवेली बहू सास से अपने कष्ट कहने में सकुचा भी सकती है। चाहे मायका हो चाहे ससुराल यदि आर्थिक व अन्य दूसरी सहायता की कमी हो तो जच्चा अस्पताल व सूतिका गृह ही में

प्रबन्ध करना चाहिए। इसमें प्रसव व प्रथम दस दिनों सम्बन्धी देखरेख व दौड़ धूप से आदमी बचा रहता है और खर्च भी कोई विशेष नहीं होता।

सहायक—यदि यह निश्चित कर लिया गया है कि जचकी घर पर ही कराना है तो इस समय के लिये किसी विश्वस्त रिश्तेदार, मां, सास, सहेली या भाभी आदि को कम से कम अनुमानित तिथि से एक माह पहिले बुलवा लेना चाहिए जिससे कि इतने समय में वह इस घर के सभी कार्यों से परिचित हो जाय या कभी कभी यह भी हो सकता है कि अनुमानित तिथि के पहले ही जचकी हो जाय। इसलिए इन सहायकों का पहिले ही आना ठीक रहता है। उत्तम तो होगा कि इन्हें पहिले से ही इस सेवा का कुछ अनुभव हो।

कमरा—इतना सब होने के बाद घर में एक कमरा निश्चित किया जाता है जहां यह कार्य अच्छी तरह से हो सके। कमरा १०″×१०″ से छोटा न हो और इसमें से रसोई का धुआं न निकले। साथ ही इसमें एक नाली या छेद हो जिसमें से पानी वगैरह बाहर जा सके। साफ और हवादार तो इसे होना ही चाहिये पर साथ ही प्रकाश भी खूब आना चाहिए। यदि जचकी का समय रात का होता दिख रहा हो तो समय रहते रोशनी का प्रबन्ध कर लेना चाहिए। बच्चे की खाट या टोकनी भी एक कोने में पड़ी रहे। सामानादि के लिये तिपाई, शीशियां आदि रखने को दीवाल में बनी आलमारी भी काम आ सकती है। फरनीचर ऐसा हो जो धोया जा सके। पानी गरम करने के लिये अंगीठी या स्टोव भी तैयार रखना चाहिए। यदि गर्मी के दिन हों तो पंखे की व्यवस्था चाहिए। इतना सब लिखने का मतलब यह

है कि ऐन समय पर भड़भड़ाना न पड़े, जैसा कि अच्छे अच्छे



जचकी का कमरा

(बच्चे का झूला, सकरा पलंग, मल-मूत्र व एनिमा के बर्तन आदि)

घरों में देखा गया है। नीचे लिखे सामान का प्रबन्ध होना चाहिये।

[१] फरनीचर— जच्चा का पलंग, बच्चे की खाट, तिपाई, आलमायरी, दो कुर्सियां, बच्चे को हवा के झोंके से बचाने के लिये एक पर्दा।

[२] तामचीनी के बर्तन — तीन चिलमची, टट्टी व पेशाब कराने के बर्तन, ऐनीमा कैन व डुश कैन।

[३] पानी गरम करने के प्रबन्ध— स्टोव या अंगीठी, माचिस, कोयला व मिट्टी के तेल की दो बोतलें।

[४] दाई का सामान— तेज कैंची कीटाणुनाशक घोल में डूबी हुई, डस्टिंग पाउडर (नाड़ पर भुरकने के लिये), नाड़ बांधने के लिये उबली हुई ट्वाइन जो पहले से उबली हुई शीशी में बंद हो। कीटाणुनाशक दवा जैसे लाईसल, डिटौल आदि।

[५] बच्चे के लिये— आंख की दवा १० प्रतिशत अरजीरौल व अन्य आंख की दवा जो चिकित्सक बतावे, शहद, नाड़ की पट्टियां जिसके विषय में लिखा जा चुका है। मुंह में लगाने की दवा सुहागा मिला हुआ शहद या ग्लिसरीन (बोरेक्स ग्लिसरीन), नवजात शिशु को लेने के लिये नरम व गरम कपड़ा, मीठा या जैतून का तेल।

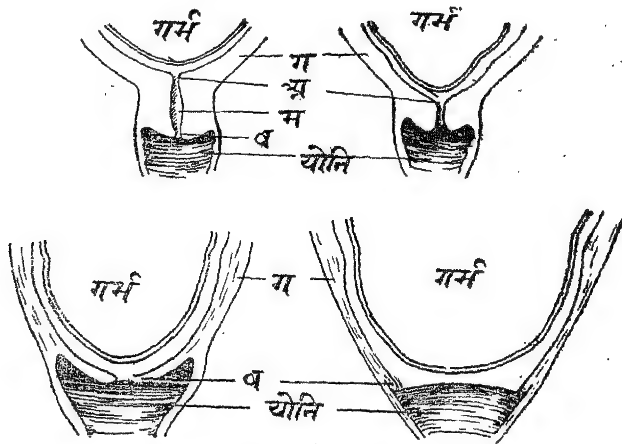
[६] माता के लिये— रुई का बंडल एक पौंड, दो गज रबड़ का कपड़ा जिससे जच्चा का पूरा बिस्तर ढंक जाय, धोबी के धुले हुए साफ कपड़े जो पट्टियों के काम आ सकें। घरों में सफेद घिसी हुई धोतियां इस काम आ सकती हैं। बन सके तो डब्बों में बन्द तौलिये (Sanitary Towels) खरीदे जा सकते हैं, ब्रांडी या स्पिरिट अमोनियम एरोमेट एक औंस – मौके बेमौके के लिये, गर्भाशय सिकोड़ने की गोलियां।

[७] अन्य — एक बर्तन जिसमें अपरा या कमल (Placenta) लिया जा सके, साबुन (अधिक स्निग्ध तत्व व ग्लिसरीन वाला), तौलिये आदि।

हैसियत और उपलब्धि के अनुसार इनमें रद्दोबदल की जा सकती है। तामचीनी के बर्तनों का काम पीतल के या अन्य बर्तनों से निकाला जा सकता है। टट्टी के बर्तन का काम तसले या मिट्टी के कुंडे से निकाल सकते हैं। मैकिन्टोश का काम बोरों के ऊपर मोटे रद्दी कागज बिछाकर भी चलाया जा सकता है।

प्रसव जचकी

जिस क्रिया से बच्चा माता के गर्भाशय से बाहर निकलता है उसे जचकी कहते हैं। यदि हम गर्भाशय को देखें तो वह हमें सकरे गले की उलटी हुई सुराही सरीखा मालूम पड़ता है। सुराही का सकरा गला गर्भाशय की ग्रीवा ही दर्शाता है। अंदर से चौड़ी चीज के निकलने के लिये गले को पहिले इतना चौड़ा होना पड़ेगा कि जिससे वह सुराही के शरीर के साथ एक सा



ग्रीवा का क्रमशः फैलाव

(आखिरी चित्र में ग्रीवा की मुटाई बिलकुल गायब हो गई है)

ग—गर्भाशय, अ—ग्रीवा का अंतर्मुख, व—ग्रीवा का वहिर्मुख, म—ग्रीवा का नलिका रूपी भाग।

मिल जाय अर्थात् गर्भाशय के मुख्य भाग और ग्रीवा में कोई रुकावट नहीं होनी चाहिये। साथ ही ऊपर से इस तरह का

दबाव पड़ना चाहिये कि चौड़ी चीज (गर्भ) नीचे और बाहर की ओर सरके। यह सब गर्भाशय की पेशियों के सिकुड़ने से होता है। वैसे तो मासिक धर्म की हर संभावित तिथि को गर्भाशय में सिकुड़न होती है पर इस समय गर्भवती को इनमें दर्द नहीं होता। गर्भ के पूर्ण बन जाने पर नवें माह के अंत में प्रकृति के किसी गुप्त नियम से अब की सिकुड़न में दर्द होता है और ग्रीवा का मुंह धीरे धीरे इतना खुल जाता है कि जिससे उसमें और गर्भाशय के पोलेपन में कोई अन्तर नहीं रहता है और गर्भाशय की मांसपेशियों के सिकुड़न के दबाव से गर्भ बाहर आता है।

पूरी जचकी तीन भागों में बांटी जा सकती है।

१. दर्द के शुरू होने से लेकर ग्रीवा के पूरे फैलाव व पानी की थैलियों के फटने तक। प्रथम बार गर्भवती में यह समय ८ से १६ और दूसरों में ८ से ११ घंटों का होता है।

२. ग्रीवा के फैलाव से बच्चा होने तक का समय— यह समय प्रथम बार गर्भवती में १ से २ घंटे और अन्य में १० मिनट से एक घंटे तक का रहता है।

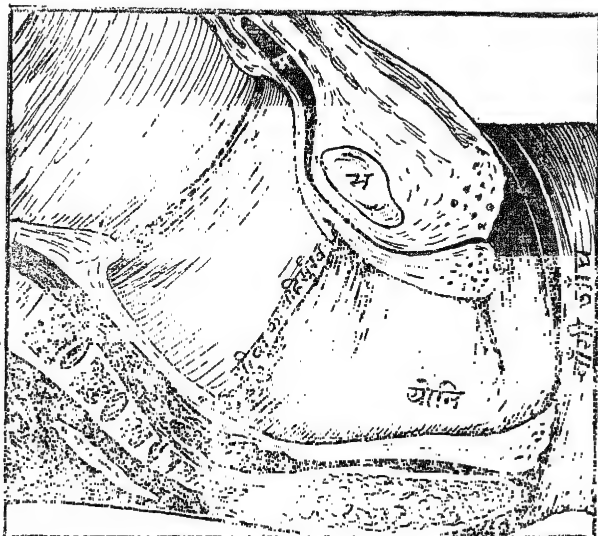
३. बच्चा होने के बाद से अपरा के निकलने तक— इसमें प्रथम बार गर्भवती में आध घंटे वा दूसरों में कुछ मिनटों का समय लगता है।

जैसे जैसे प्रसव निकट आता जाता है गर्भ बांयीं ओर सिर के बल नीचे आता जाता है। प्रथम प्रसव में एक माह पहिले से गर्भ इस स्थिति को प्राप्त होता है पर बाद में तो एक दो घंटे पहिले से ही ऐसी स्थिति लेता है। सिर की भी एक विशेष स्थिति रहती है जिसे शास्त्रीय भाषा में Left occipito-

anterior कहते हैं। दूसरी स्थितियों में सिर की स्थिति दूसरी हो जाती है, दूसरी बाजू सिर बैठता है, कभी पैर तो कभी चूतड़ या पीठ आती है। इन सब में प्रसव के समय बहुत अधिक कष्ट का सामना ही नहीं करना पड़ता वरन् कभी कभी प्राणों का भी खतरा रहता है। ऐसी हालत में पहिले से ही गर्भ को पेट के अन्दर घुमाकर उसकी स्थिति बदली जा सकती है और उसे ठीक कर कष्ट को दूर किया जा सकता है।

गर्भाशय की दीवाल की पेशियां इतनी लचीली होती हैं कि छोटा सा गर्भाशय फैलकर इतना बढ़ जाता है कि पूरा बड़ा गर्भ उसमें समा जाता है और इसी तरह ग्रीवा और योनि की भी दीवालों का हाल रहता है। ये क्रमशः इतनी फैल जाती हैं कि गर्भ धीरे धीरे इनमें से निकलता है। यह सब पेशियों के क्रमशः सिकुड़ने और ढील देने से होता है। जब पेशियां सिकुड़ती हैं तो एक विचित्र दर्द होता है और जैसे जैसे बच्चा ग्रीवा व योनि में से खिसकता आता है वैसे वैसे दर्द बढ़ता जाता है। गर्भ के साथ ही साथ पानी की थैली जिसके अन्दर शिशु रहा करता है भी उसके आगे आगे गर्भाशय और ग्रीवा में से बाहर निकलती है। इस समय थैली को बाहर अर्थात नीचे की ओर से कोई सहारा नहीं रहता क्योंकि ग्रीवा का मुंह खुलकर गर्भाशय से मिल जाता है। गर्भाशय की मांस पेशियों के सिकुड़न के दबाव के कारण यह थैली फट जाती है और गर्भ का भी सहारा निकल जाता है। दर्द बढ़ते जाते हैं और फिर एक तेज दर्द के साथ शिशु जन्म लेता है। इस समय बहुत सावधानी रखी जानी चाहिए। गर्भवती के पीछे की ओर खड़े होकर या बैठकर गुदा की ओर से ऊपर और सामने की तरफ सहारा देना चाहिए फिर जैसे जैसे सिर बाहर आये उसे आगे याने सामने

की ओर उंगलियों से आहिस्ता आहिस्ता सरकाना चाहिए। असावधानी से सिर के निकलते समय दबाव के कारण कहीं का



जचकी के ठीक पहिले यौन मार्ग

ग—मलाशय, म—मूत्राशय, भ—भगास्थि ग्रीवा की रुकावट बिलकुल मिट गई है।

भी हिस्सा फट सकता है जिससे खून तो बहता ही है पर बना हुआ घाव विष के फैलने में (Infcetion) सहायता देकर एक गम्भीर समस्या उत्पन्न कर जीवन मरण का प्रश्न बना देता है। यदि चिकित्सक ने तुरन्त सिलाई व योग्य चिकित्सा कर परिस्थिति सम्भाल भी ली तो भी अगली जचकी के समय इस कमजोर स्थान के फटने का डर बना रहता

है। जब कभी गर्भ के अधिक स्वस्थ रहने से सिर कुछ बड़ा रहता है तब भी कष्ट अधिक होता है। कई दाईयां अज्ञानतावश स्वच्छता का ध्यान नहीं रखतीं और व्यर्थ ही योनि में बार बार हाथ डाला करतीं हैं। गर्भवती की बुलाई हुई विश्वस्त सहेली, माता अथवा सास को इस ओर ध्यान रखना चाहिए।

शिशु के जन्म के लगभग आध घंटे के अन्दर ही अपरा बाहर आता है। इस समय तक गर्भाशय के ऊपरी किनारे पर आड़ा हाथ रखे रखना चाहिए। इस बीच जल्दी से जल्दी शिशु की आंखों व उसके मुँह की ओर ध्यान देना चाहिए। नाड़ की धड़कन के बन्द होने के बाद ही उसे काटना चाहिए। धड़कन बन्द होने के बाद काटने से शिशु को लगभग १½ छटाक और रक्त मिलता है। अपरा निकलते समय माता का लगभग डेढ़ पाव रक्त निकल जाता है।

नाड़ और अपरा से ही बच्चा माँ के पेट में अपना पोषण करता है। ये गर्भाशय के अन्दर की दीवाल पर और गर्भ के बीच में कमलगटा की तरह रहते हैं। उसकी डंडी नाड़ के रूप में बालक की नाभि से और कमलगटे का चपटा हिस्सा अपरा के रूप में दीवाल के अन्दर बिधा हुआ रहता है। अपरा का व्यास ९" रहता है तथा मध्य में जहाँ नाल जुड़ा रहता है वहां यह ¾" मोटा रहता है। इसमें रक्त की छोटी छोटी नलिकाओं का जाल सा बिछा रहता है जहाँ से रक्त एक तरह से छनकर बच्चे को नाड़ के द्वारा मिलता है। नाड़ तो इनसे बनी हुई मुख्य नलिकाओं का समूह ही है जिससे बच्चे को माँ से शुद्ध रक्त अपरा के द्वारा मिलता है और उसका अशुद्ध रक्त अपरा तक

पहुंचता है। नाड़ या नाल लगभग २०" लम्बी १।२" मोटी रहती है जिसमें रक्त ले आने व ले जाने वाली अलग अलग नलिकाएं रहती हैं। इस तरह अपरा और नाल वास्तव में बच्चे के लिये तीन काम करते हैं:—

[१] पोषण [२] श्वासोच्छ्वास [३] रक्त शुद्धि।

देखभाल—जब दर्द शुरू होने लग जाय तो गर्भवती को घबराना नहीं चाहिये। अपने कीमती जेवर आदि उतार कर संभाल लेना चाहिये। इस समय वह चाहे तो घर का काम करे चाहे वह टहले पर लेटे नहीं क्योंकि वह कहां तक लेटी रहेगी? लेटने से उतावलापन और घबराहट तो होती है दर्द भी कम पड़ने लग जाते हैं। वैसे यदि आवश्यकता हो तो वह आराम से बैठ सकती है और किसी भी तरह से जी बहला सकती है।

यदि निश्चय किया जा चुका है कि जचकी घर पर नहीं करना है तो अस्पताल व सूतिका गृह जाने की तैयारी कर देना चाहिए नहीं तो जचकी के कमरे को ठीक करना चाहिए। उसमें से फालतू सामान उठाकर उस समय के लिए बताया हुआ सामान जमा देना चाहिए। दाई व नर्स को खबर दे देना चाहिये।

गर्भवती का बिस्तरा कड़ा होना चाहिये। सकरा तखत ठीक रहता है। इसमें दोनों ओर से उसे आसानी से संभाला जा सकता है व उसे भी आजूबाजू की पकड़ आसानी से मिल जाती है। इस पर कम्बल, चादर और दरी के ऊपर एक लम्बा मोम कापड़, रबर का कपड़ा या बोरा बिछाकर मोटा कागज भी बिछाया जा सकता है जिससे न चादर आदि और न कमरा ही गंदा होता है।

इस समय साबुन के पानी का एनिमा लेना चाहिये। साथ ही पेशाब भी २–२ घंटों में कर लेना चाहिए जिससे वह जमा न हो सके। यदि भूख लगे तो शुरू ही में तो खाया जा सकता है पर बाद में थोड़ा थोड़ा गर्म दूध पिया जा सकता है। शक्कर अधिक मिलाना ठीक है। शक्कर जल्दी पचकर ताकत ही देती है। कई घी भी मिलाते हैं। यदि हाजमा अच्छा है तो ठीक है, नहीं तो अनपच पैदा कर बाद में तकलीफ ही देता है। यदि ठन्ड के दिन हों तो कमरे को गर्म रखना चाहिये और गर्भवती को मौजे पहिन लेना चाहिये।

जैसे जैसे दर्द बढ़ना शुरू होते हैं वैसे वैसे ग्रीवा का मुँह खुलना शुरू हो जाता है और गर्भ नीचे व बाहर की ओर खिसकता आता है। इस समय दाई व नर्स का कर्तव्य है कि वह गर्भ की स्थिति को फिर से देखे यदि वह ठीक नहीं है तो चिकित्सिका को खबर दे जो जैसा उचित होगा वैसी सलाह देगी। साथ ही गर्भ के हृदय की धड़कन भी सुन लेनी चाहिए इससे गर्भ की दशा का पता चलता है। यदि सब ठीक है तो जैसे जैसे समय बढ़ता जाय गर्भवती को दर्द के समय साँस रोकने और बाद में जोर लगाने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये। इसके लिये वह उकड़ूँ भी बैठ सकती है। यदि वह थक रही हो या बैठने से डरती हो तो तखत को दोनों हाथों से पकड़ कर जोर लगा सकती है। यह सब ग्रीवा के खुल जाने पर ही करना चाहिये।

अपरा निकलने के पहिले गर्भाशय की सिकुड़न को तेज करने के लिये कोई सुई नहीं लेना चाहिये जब तक कि कोई कुशल चिकित्सक खुद न कहे।

इस प्रकार धैर्य के साथ शिशु का जन्म होने के बाद

अपरा के निकलने की राह देखना चाहिये।

पहिले कहा जा चुका है कि शिशु के जन्म के बाद पेट पर गर्भाशय के ऊपरी भाग पर आड़ा हाथ रखना चाहिये जिससे उसमें से रक्त न बहे और न उसमें हवा ही घुसे। इससे गर्भाशय में जमा होने वाले रक्त का भी पता चलता है। अपरा के पीछे खून के जमाव के दबाव से अपरा बाहर फेंका जाता है। गर्भाशय से अपरा निकलने की निशानियां बिलकुल स्पष्ट होती हैं। नाड़ कुछ और बाहर निकलता है और गर्भाशय की सिकुड़न से पेट में भगास्थि के ऊपर उठाव आ जाता है। इस समय इस उठाव को नीचे और पीछे की ओर दबाने से अपरा योनि मार्ग से जल्दी ही बाहर आ जाता है। इसके बाद अपरा का निरीक्षण करना चाहिये जिससे कि निश्चय हो जाय कि वह झिल्लियों के साथ पूरा ही निकला है। साथ ही विटप प्रदेश (भग और गुदा के बीच का हिस्सा) को दुबारा देख लेना चाहिये कि कहीं मांस फट तो नहीं गया है। शुरू की यह देखरेख भविष्य की बहुत बड़ी तकलीफों को रोक देती है। अब तक बराबर गर्भाशय के ऊपरी हिस्से पर हाथ रखे रहना चाहिये जिससे कि अन्दर रक्त न बहे और (गर्भाशय को दबाते हुए) पेट की पट्टी के पूरी और अच्छी तरह बंध जाने पर ही हाथ को हटाना चाहिये। पेट की पट्टी बांधते बांधते दाई अपरा को एक अलग बर्तन में रख लेती है और माता को जन्तुनाशक घोल (डिटोल या लायसोल एक चम्मच तीन पाव उबले हुए कुनकुने पानी में) से अच्छी तरह से पोंछ देती है। भग के ऊपर रखने के लिये अच्छी साफ स्टरलाइज्ड रुई को जालीदार कपड़े (guage) में लपेट कर ८"×४" की गद्दी बनाई जाती है और फिर लंगोट नुमा पट्टी से उसे स्थिर कर दिया जाता है।

इसके बाद माता को दूसरा अच्छा पलंग और बिस्तरा दिया जाता है या उसी पर अब दूसरा बिस्तरा बदल दूसरी रबर भी बिछा दी जाती है। सहेली व माता को समझा दिया जाता है कि हर पेशाब व पैखाने के पश्चात् भग की नई गद्दी बदलना चाहिये। इसमें सफाई की बहुत फिकर रखना चाहिये क्योंकि इस समय योनिमार्ग व गर्भाशय किसी बड़े फोड़े से कम नहीं है। यदि लापरवाही से किसी कीटाणु का विष अन्दर चला गया तो स्त्री की खैर नहीं।

अपरा को लोग एक बर्तन में रख कर किसी भी जगह गाड़ देते हैं। इसमें चिकित्सक की सलाह की आवश्यकता नहीं है। अपनी अपनी रीति अपनाई जा सकती है। हां, यह देख लेना आवश्यक रहता है कि पूरा अपरा मय पूरी झिल्लियों के ही साथ बाहर भेजा जा रहा है। यदि ऐसा नहीं होता तो रक्त का बहना बंद न होगा। यहां पर एक चेतावनी देना आवश्यक है कि किसी भी प्रसूता को कभी अकेले नहीं छोड़ना चाहिये क्योंकि कमरे में रहने से दाई की सफाई पर नियंत्रण रखा जा सकता है। प्रसूता को ढाढ़स बंधाया जा सकता है। व्यर्थ में दूसरों को आने नहीं देना चाहिये क्योंकि कई प्रसूता की कमजोरी व बेबसी हालत का लाभ उठा उसे नुकसानदायक चीजें खिलाती हुई पाई गई हैं।

नाड़ काटना और शिशु को अलग करना—शिशु का जन्म होने के बाद ही अपरा या कमल भी बाहर निकल पड़ता है जब तक अपरा बाहर न निकले तब तक गर्भवती की, बच्चे की व नाड़ के बांधने की देखरेख करना चाहिये। इस समय तक माता काफी थक चुकी होती है उसे दूध में एक दो चम्मच

ब्रांडी दी जा सकती है। यदि बहुत ज्यादा कमजोरी मालूम पड़ती हो तो चिकित्सक सुई भी दे देगा। अब नाड़ू के काटने की तैयारी करना चाहिये। इसमें उबली हुई ट्वाइन से तीन गठानें लगाना आवश्यक है। एक शिशु की नाभि से दो इंच की दूरी पर दूसरी इससे १½" दूर और तीसरी भग के बिलकुल पास। भग वाले हिस्से को बांधने के पहिले थोड़ा सा खींचकर देखना चाहिये कि कहीं वह योनिमार्ग में उलझा हुआ न हो। अपरा के गर्भाशय से अलग होते समय भग के पास वाली गठान कुछ नीचे खिसक आती है। इससे भी अपरा के निकलने की सूचना मिलती है। गठानें धड़कन बंद होने के बाद ही लगाना चाहिये इससे शिशु को लगभग १½ छटाक रक्त अधिक मिलता है और इस समय का इतना रक्त बहुत महत्व रखता है। गठानें लगाने के बाद शिशु के पास वाली दोनों गठानों के बीच नाड़ू को साफ की हुई तेज कैंची से काट देना चाहिये। शिशु मां से अब अलग किया जा सकता है जितनी देर हम धड़कन के लिये ठहरते हैं उतनी देर में शिशु की आंखों व मुँह की ओर ध्यान दे देना चाहिये तथा मुंह में से यदि कुछ फंसा हुआ हो तो आहिस्ता से निकाल लेना चाहिये।

नारी जीवन में प्रसव एक प्राकृतिक एवं कष्ट रहित क्रिया है। मानसिक शांति, धैर्य एवं सफाई इसकी सफलता के लिये आवश्यक हैं।

प्रसूति काल

इसे प्रसवोपरान्त काल भी कहा जाता है। अंग्रेजी में इसे Puerperium कहते हैं। यह काल हर स्त्री के लिये अलग अलग होता है। वैसे तो इसे सवा महीने का गिना जाना चाहिये अर्थात् जब तक लोकिया बहना बन्द न हो। आजकल तो यह



जचकी के बाद का गर्भाशय

ग—मलाशय

म—मूत्राशय

भ—भगास्थि

य—योनिमार्ग

१० दिनों का ही समझा जाता है पर यह दृष्टिकोण गलत है क्योंकि इस समय के बाद भी लोकिया पानी सा (serum) ही बहता है और गर्भाशय भी भगास्थि के नीचे तक ही सिकुड़ पाता है। इस समय जच्चा की देख भाल बहुत ही महत्वपूर्ण है। पहिले बतलायी हुई बातों का ध्यान न रखने से न जाने कितनी माताओं के गर्भपात हो जाते हैं या वे संतान का मुख देखने के पहिले अर्थात जचकी के पहिले ही हमेशा के लिये संसार छोड़ देती हैं। इसी प्रकार जचकी के बाद की लापरवाही से भी समाज

को बहुत बड़ी मातृशक्ति की हानि उठानी पड़ती है।

१ गर्भाशय. पहिले कहा जा चुका है कि जचकी के बाद पूरा योनि मार्ग फोड़े सरीखा हो जाता है। पौन छटाक के वजन वाला गर्भाशय जचकी के बाद, पहिले नहीं, सेर भर के ऊपर वजन वाला रहता है। ऊंचाई में यह अब नाभि के ऊपर रहता है। चौथे दिन इसकी ऊंचाई नाभि के कुछ नीचे, दसवें दिन भगास्थि के नीचे तथा पन्द्रहवें दिन तक यह पूरी तरह वस्तिगव्हर में होता है। पर इसे पहिली की सी हालत में सिकुड़ कर लौटने के लिये ८ से १० हप्ते लग जाते हैं। इसलिये इतने समय तक इसमें उत्तेजना न आनी देना चाहिये और हमारे यहां शायद इसीलिये कम से कम तीन माह के लिये सहवास से पूर्णतया दूर रहने के लिये कहा गया है।

२. लोकिया (Lochia, प्रसूति कालिक रक्त स्राव) जिस तरह फोड़ों में से लाल गाढ़ा पानी सा झरा करता है उसी प्रकार सिकुड़ते हुए गर्भाशय में से भी यह लाल पानी सा झरा करता है। पहिले पहल इसमें खून रहता है फिर खून मिश्रित गाढ़ा पानी और फिर उससे पतला केवल पानी सा (Serum) ही निकला करता है। छठवें दिन से तो ग्रीवा की ग्रन्थियों का साफ रस ही रहा करता है। फिर धीरे धीरे यह बन्द हो जाया करता है। इस पूरे समय में यह लगभग आध सेर से सवा सेर तक बह जाता है। पर हर जच्चा की हर जचकी में यह घटता बढ़ता है। इसमें कोई बदबू नहीं रहती।

३ दूध—जचकी के पहिले बहुत सा खून गर्भ को पालने के लिये और गर्भाशय के पोषण के लिये उपयोग में आता था।

अब शिशु को दूध चाहिये और गर्भाशय को सिकुड़ने के लिये लगभग नहीं के बराबर खून । इसलिये जो जच्चा बच्चे को अपना दूध पिलाती हैं उसका गर्भाशय जल्दी और अच्छी तरह सिकुड़ता है । इसलिये शिशु को दूध पिलाना शिशु को तो लाभकारी है ही पर माँ को भी लाभकारी है।

पहिले ४८ घंटों में तो स्तनों से चेंप (Colostrum) ही निकलता है और फिर इसके बाद दूध बराबर उतरता है कई परिवारों में इसीलिये तीसरे दिन (४८ घंटे के बाद) से दूध पिलाने की प्रथा है। चेंप के, अपने विशेष गुण रहते हैं।

४. जचकी के बाद कुछ ध्यान रखने योग्य बातें ।

अ. जच्चा का चेहरा मुरझाया हुआ नहीं चाहिये थका हुआ हो सकता है ।

ब. नींद बराबर आना चाहिये ।

स. शरीर का तापमान ९९.५ फै० (बगल में) से अधिक नहीं बढ़ना चाहिये ।

ड. नाड़ी की गति ८०-९० प्रति मिनिट के अन्दर ही चाहिये ।

इ. दूध दूसरे दिन ४८ घंटे के बाद से बराबर आना चहिये ।

उ. लोकिया धीरे धीरे बन्द होना चाहिये, कोई बदबू नहीं चाहिए। इसका दाग भीतर की तरफ गाढ़ा लाल और आसपास फीका होता जाता है। विषाक्त लौकिया का रंग बीच में हलका किनारों पर अधिक लाल रहता है।

ये सब स्वस्थ जच्चा की निशानियां हैं। इनका न होना किसी किस्म का जहर का होना (किसी कीटाणु का प्रवेश) बतलाता है। इन्हें देखते ही जच्चा के घरवालों और चिकित्सक को सावधान हो जाना चाहिये।

इसलिये जच्चा के लिये बहुत जरूरी है कि वह अपने विटप प्रदेश (भग व गुदा के बीच का भाग) व भग को बिलकुल सूखा रखे कि जिससे कोई कीटाणु प्रवेश न कर सके। साथ ही साथ उसे ध्यान रखना चाहिये कि लोकिया बराबर जैसे बहना चाहिये वैसा बहता रहे।

५ आराम व परिश्रम—इस समय भी आराम और व्यायाम की अपनी महत्ता है। आराम का गलत उपयोग जच्चा को बीमार करता है। पेशाब टट्टी के लिये २४ घंटे के बाद उकड़ूं बैठना चाहिये। ४८ घंटे के बाद तो दिन में थोड़ी देर के लिये सबेरे शाम उठकर बैठना चाहिये। लेटे लेटे या बैठे बैठे हाथों को ऊपर-नीचे, आजू-बाजू हिलाना चाहिये। इस सबसे यह फायदा है कि लोकिया अच्छा बहता है, ताकत बनी रहती है तथा जच्चा चुस्त रहती है।

६ भोजन—प्रसव के बाद जच्चा काफी कमजोर पड़ जाती है क्योंकि एक तो उसे काफी जोर लगाना पड़ता है तथा दूसरे काफी खून भी बह जाता है। इतनी कमजोरी में उसकी पाचन शक्ति भी कमजोर पड़ जाती है। इस हालत में उसे पहिले दो दिन पौष्टिक पर आसानी से पचनेवाला भोजन दिया जाय। दूध, फलों का रस, हलकी चाय (दूध ज्यादा), टमाटर का रस, मटन का शोरबा आदि देना चाहिये। उत्तेजक पदार्थों याने तेज चाय, ब्रांडी की आवश्यकता तो तभी पड़ती है जब वह बहुत

अधिक कमजोर हो। जहां तक हो इनसे बचना चाहिये। बाद में धीरे धीरे साधारण भोजन शुरू किया जा सकता है। गेहूँ और दूध यदि भोजन में अधिक रहें तो खून अधिक बढ़ता है। इन्हें मांस से प्राथमिकता दी जानी चाहिये।

७ नित्य कर्म—यद्यपि जचकी को पहिले पेशाब करा दिया जाता है फिर भी जचकी होने के छह घंटे के अन्दर जच्चा को पेशाब हो जाना चाहिये। इस प्रकार एक तो मूत्राशय में पेशाब नहीं रहता, दूसरे जचकी के बाद जच्चा के कमजोर पड़ जाने के कारण वह जोर नहीं लगा पाती और तीसरे आदत न होने से लेटे लेटे पेशाब नहीं उतरती। हमें याद रखना चाहिये कि भरा हुआ मूत्राशय गर्भाशय पर दबाव डाल उसमें अधिक दर्द पैदा करता है और साथ ही स्वतः शरीर के अन्दर जहर का घर बना रहता है और विष फैलाने में सहायक होता है। इसलिये यदि पेशाब न हुआ हो तो छह घंटे के बाद जच्चा को पीठ पर सहारा देकर कुछ उठाना चाहिये और पेशाब का बर्तन भग से लगा देना चाहिये। अधिकतर इस तरह से पेशाब हो जाता है।

यदि विटप प्रदेश का मांस कट गया हो तो अच्छी तरह उबली हुई धातु की मूत्रोत्सर्जक नलिका (Metal Catheter) द्वारा पूर्ण सफाई व सावधानी से पेशाब निकालना चाहिये कि जिससे पट्टी व टांके गीले न हों।

कब्जियत भी जच्चा को बहुत तंग किया करती है। यदि जुलाब देना ही पड़े तो ३६ घंटे के बाद ही देना चाहिये। पैरा-फिन लिक्विड, कैस्टर आयल, मैगनीशियम सलफेट आदि कोई भी एक औंस तक दिये जा सकते हैं।

८ सफाई—जितनी बार पट्टी बदली जाय उतनी बार भग, योनिद्वार व भगोष्ठों की सफाई जन्तुनाशक घोल से करना चाहिये। चिकित्सक की आज्ञा के बिना डुश लेना खतरनाक है।

९ परीक्षण—जचकी के तीन हफ्ते के बाद जच्चा का यौन परीक्षण होना चाहिये जिससे यदि गर्भाशय की स्थिति में अन्तर आ गया हो तो ऐन समय पर ठीक किया जा सके।

१०. दाई व ऊपरी टहल—इस समय के लिये घरों में दाई और खवासिन (नाइन) काम करने के लिये रहती हैं। ये जचकी के समय नर्स का काम तो करती ही हैं परन्तु सोर उठने तक जच्चा की मालिश, सेवा, शिशु का नहलाना, रोज के गन्दे कपड़े धोना, कमरे की सफाई करना आदि भी किया करती हैं। आजकल इन्हें इम्तहान देना पड़ता है जहां इन्हें सफाई व जचकी के काम से परिचित कराया जाता है। इनके पास काम लायक सामान भी रहता है। कई जगह अब ये गंदे कपड़े नहीं धोतीं। वहां पर इस काम के लिये दूसरी कोई सेविका नियुक्त की जाती है। यदि सब कुछ ठीक रहे तब भी जच्चा को कम से कम ११ दिनों तक पूरा आराम दिया जाना चाहिये फिर चाहे वह अपना काम आप खुद संभाल ले। इतने दिनों के बाद बहुत ही थोड़ा लोकिया गिरा करता है। थोड़े दिनों तक ठंडे पानी के बदले कुनकुना पानी ही काम में लाना चाहिये।

खतरे की घंटियां—जच्चा की इतनी देखरेख होने पर भी हमें कम से कम १० दिन तो बहुत सचेत रहना पड़ता है और इसलिये अस्पतालों में उसे १० से १५ दिन तक रखने की रीति सी बन गई है। इतने दिनों के अन्दर ही सफाई की असावधानियां अपना असर बता देती हैं।

१. जचकी का बुखार—भारत में मलेरिया (फसली-बुखार) आम तौर से पाया जाता है और अधिकतर यही बुखार का कारण भी रहता है। यदि हो सके तो जच्चा के खून की भी जांच करा लेना उचित है क्योंकि कई समय जचकी का बुखार और फसली बुखार एक साथ भी हो सकते हैं। जचकी का बुखार तो अपरा के टुकड़ों के अन्दर रह जाने, ग्रीवा व विटप प्रदेश के फट जाने अथवा सफाई की कमी से ही हुआ करता है। योनि मार्ग में सूजन आ जाती है बच्चे दानी में व कमर में दर्द होता है। लोकिया में बदबू रहती है और साफ रहने के बदले उसमें खून मिला होता है तथा उसका दाग भी बाहरी ओर अधिक लाल रहता है। ऐसे समय में पलंग का सिरहाना ऊंचा कर देना चाहिये जिससे कि लोकिया आसानी से बह सके। हर हालत में चिकित्सक से पूरी जाच कराना ठीक है।

२. मूत्राशय व गुर्दे में विकार—जब कीटाणुओं का मूत्र द्वार से प्रवेश हो जाता है तो इनमें सूजन आती है, पेशाब जलता है व बुखार आदि आता है।

३. गर्भाशय का ठीक तरह से सिकुड़ना—सामान्यतः १०वें दिन के बाद लोकिया सफेद पानी सा हो जाता है और १५ वें दिन के बाद तो भगास्थि के नीचे चला ही जाता है। कभी कभी जचकी का बुखार आने लगता है और गर्भाशय भी ठीक तरह से नहीं सिकुड़ता है। दस दिन तक तो आराम अवश्य करना चाहिये इसका मतलब यह नहीं कि बेबसी में जो स्त्रियां जल्दी काम शुरू कर देती हैं वे बीमार हो जाया करती हैं नहीं पर यह सत्य है कि उनके बीमार होने की संभावना अधिक रहती है।

लोकिया कभी एकदम बहने लगता है । इसकी ठीक जांच कराना चाहिये क्योंकि यह भी सिकुड़न में गड़बड़ बताता है ।

४. छातियों में सूजन—इसमें छातियों में सूजन व दर्द होता है । जगह लाल व कड़ी पड़ जाती है । लापरवाही हुई तो फोड़ा बन जाता है जो बाद में कटाना पड़ता है । सिकाई इसमें बहुत लाभदायक है । दूध को इकट्ठा नहीं होना देना चाहिए और न बच्चे को पिलाना चाहिये ।

५. पैरों में सूजन व दर्द—सूजन में चिकित्सक को बताना चाहिये ।

६. एक दम सांस लेने में कष्ट होना और दम घुटना—ये दोनों दशायें (५ और ६) पैर व फेफड़ों की रक्त नलिकाओं में एंबोलस (embolus) के फंस जाने से यदाकदा ही होती हैं इनका इलाज योग्य चिकित्सक से कराना चाहिये ।

७. पुरानी बीमारियां—अधिक कमजोरी हो जानेसे पुरानी बीमारियां (विशेषकर हृदय, क्षय व वृक्क की) भड़क उठती हैं । क्षय तो लगभग असाध्य हो जाता है और स्त्री के प्राण तक ले लेता है । इन रोगों के होते हुये गर्भवती होना तो अपने आप मौत को बुलाना है ।

८. पागलपन—लाखों में एक स्त्री को गर्भ धारण, जचकी व प्रसूति काल में पागलपन सवार हो उठता है । इसे अंग्रेजी में (Insanity of pregnancy) कहते हैं ।

९. चूचुकों में तकलीफ—इस विषय में लिखा जा चुका है । यदि कड़ी है तो तेल या चेहरे में लगाने की क्रीम लगाई

जा सकती है। यदि फट गये हैं तो टिंचर बैंजाइन कं. (Tr. Benzoin Co) भरी रुई चिपकाने से २४-४८ घंटों में आराम आ जाता है। इतने समय के लिये बच्चे को उबाले छने पानी व ऊपरी दूध पर रखा जा सकता है।

हर्ष का विषय है कि चिकित्सा विज्ञान ने बचाव व इलाज के दृष्टिकोणों से इतनी उन्नति कर ली है कि कुशल चिकित्सक की देखरेख में रहने से घरवालों को, जच्चा को व बच्चे को डरने की कोई आवश्यकता नहीं है।

१. *कुछ रीति रिवाज*—भारत में जचकी के तीन दिन बाद सोंठ, बादाम, मखाने, गुड़, घी आदि देने की प्रथा है। भिन्न-भिन्न जगहों में इनके अनुपात व मिश्रण में अन्तर पड़ता है। इसे 'हरीरा' कहते हैं। ये सब वस्तुएं ताकत देने वाली होती हैं तथा गर्भाशय को भी सिकोड़ती है जिससे लोकिया अच्छी तरह बह जाय। आधुनिक विज्ञान ने गर्भाशय को सिकोड़ने के लिये इरगोट (Ergot) नामक पदार्थ में से भिन्न भिन्न प्रकार की पेटेन्ट गोलियां आदि बनाई हैं जो चिकित्सक से पूछकर दी जा सकती हैं।

२. अक्सर सोर उठने तक विशेषकर पांच दिन तक जच्चा को अकेले नहीं छोड़ा जाता। इस समय में वह न अधिक चल फिर सकती है और न उसमें जोर से बुलाने की ताकत रहती है। वह रोगी नहीं होती पर रोगी सरीखे सेवा का अधिकार रखती है। इसलिये यदि कोई भी उसके पास रहता है तो शीघ्र ही उसकी जरूरत पूरी हो जाती है।

३. कई जगह जच्चा के बिस्तरे में तकिये के नीचे लोहे की चीज विशेषकर चाकू आदि रखने का रिवाज है।

हो सकता हो कि कभी किसी के ऊपर किसी दुश्मन व जंगली जानवर ने हमला किया हो जिसके कारण बचाव के लिये तलवार आदि सिरहाने रखने का रिवाज पड़ गया हो जो घटते घटते चाकू बन गया हो। पर हां कुछ न कुछ सिरहाने रखना अच्छा रहता है। घरों में अक्सर बिल्लियां आतीं हैं और ये कभी कभी बच्चों को पंजा मार देती हैं। इसीलिये कभी भी बिल्ली जच्चा के कमरे में सहन नहीं की जाती। कई व्यक्तियों का विश्वास है कि लोहा सिरहाने रखने से डरावने स्वप्न नहीं आते। यह विश्वास भी इस प्रथा का एक कारण है।

४. सोर उठाना—इस रिवाज का संबंध घर की सफाई, जच्चा को जच्चा के पद से हटाकर माता के पद पर बैठालना ही है। भिन्न भिन्न जगहों की जलवायु में अन्तर होने से इस रिवाज में भी फरक पड़ गया है। जच्चा कहीं ३-५-११-२१-३१ और ४१ वें दिन और कहीं रोज नहलाई जाती है। कोई पानी में नीम की पत्ती डालकर उबालता है तो कोई कुछ। इस तरह पानी को शुद्ध किया जाता है। इन दिनों में विशेष कर सिर नहलाने की प्रथा है। जच्चा के कमजोर होने के कारण ही उसकी सहायता व सेवा इतने दिन तक की जाती है। सहेली, माँ या सास जो भी जचकी कराने के लिये आतीं हैं वे इसके बाद चली जाती हैं। इतने दिनों में बच्चा भी कुछ संभल जाता है।

५. बांझ व अनजानी स्त्रियां—प्रसूति काल में इन्हें अक्सर जच्चा के पास जाने नहीं दिया जाता। हर स्त्री सन्तान चाहती है, माता बनने की तीव्र इच्छा रखती है। सब में नहीं पर अधिकांश में जलन व ईर्षा अधिक होती है। जादू, टोने, टोटके के अन्ध विश्वास के फेर में फँसकर ये कई समय जच्चा की

असहायावस्था का लाभ उठा अमानवीय काम कर बैठती हैं। इसलिये इनका आना मना किया जाता है। वैसे भी शिशु पालन के ये प्रथम दिन बहुत महत्व के रहते हैं। माँ और शिशु को इस समय पूर्ण मानसिक विश्राम चाहिये। वे अपने समय पर खावें, सोयें, टहलें, जागें, समय पर बच्चे को दूध मिले। व्यर्थ की सहानुभूति दिखलाने वाले उनके आराम में बाधा डालते हैं जो अनुचित है। केवल उन्हीं को जच्चा के पास जाने दिया जाय जिन्हें वह खुद चाहती है, शेष को किसी भी तरह रोका जाना चाहिये।

प्रसूति काल का उद्देश्य जच्चा को स्वास्थ्य लाभ कराना व शिशु को इतना स्वस्थ्य बना देना है कि जिससे उसकी बाढ़ सुचारु रूप से चलती रहे। हर गृहस्थ को इस काल में होनेवाली संभावित खराबियों से जानकारी रखना चाहिये। स्वच्छता, आराम, व्यायाम, शुद्ध वायु, प्रकाश और नियमित व पौष्टिक भोजन आदि का भूल जाना नादानी है।

नवजात शिशु

जच्चा के साथ ही शिशु की देखभाल चला करती है। जच्चा को पहिले देखा जाय या बच्चे को इस पर विवाद ही नहीं उठता। काम करने वालों के हाथ रुकते ही नहीं। इसी समय के लिये तो दाई, नर्स और सहेली वहां रहती हैं। एक कुछ करता है तो दूसरा कुछ।

१ पहिली देखरेख—बच्चा होने के पहिले ही नर्स व दाई को एक नरम व गरम गद्दी व कंबल, और गरम (शरीर तापमान पर ९९ फे०) पानी तैयार रखना चाहिये। सिर के योनि मार्ग से निकलते ही चेहरे और आंखों को बहुत ही हलके हाथों से इस गरम पानी के फोहे से पोंछ देना चाहिये। मुंह और नथुनों के अन्दर जो चिकना पदार्थ [mucous] रहता है उसे भी जालीदार कपड़े या गीली रुई [Guage or Wet cotton] से धीरे से निकालना चाहिये। बच्चे का मांस, चमड़ा, आदि बहुत ही कोमल रहते हैं, जरा भारी हाथ से ही उनमें चोट पहुँच सकती है। जब शिशु पूर्ण रूप से पैदा हो जाय तो उसका सिर नीचे की ओर झुका देना चाहिये जिससे मुँह व गले में फंसे हुए चिकने पदार्थ को अपने आप ही निकलने में आसानी हो। इस बीच में इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि नाड़, मल आदि गन्दे पदार्थों से न छू जाय।

२ नाड़ काटना—शिशु की दशा पर ही जल्दी या देर में यह काटा जाता है अर्थात् यदि शिशु नीला नहीं पड़ा हुआ या

उसकी सांस नहीं रुक रही है तब तो नाड़ की धड़कन के लिये ठहरना ठीक है, नहीं तो उसी समय नाड़ काटना चाहिये। गठांने लगाने के पहिले नाड़ को योनि द्वार से हलके हलके जितना खिच सके बाहर खींच लेना चाहिये क्योंकि इसके पास वाली गठान से ही तो अपरा के निकलने के पहिले नाड़ का बढ़ना मालूम होता है। खींचते समय जोर बिलकुल नहीं लगाना चाहिये। इसके बाद तीन गठांने लगाना चाहिये। एक शिशु की नाभि से दो इंच दूर दूसरी इससे १½ इंच हटकर और तीसरी योनिद्वार के पास। पहिली और दूसरी गठान के बीच नाड़ काटना चाहिये। कैंची तेज हो और पहिले ही से जन्तुनाशक घोल में रखी हुई हो और इस समय गरम उबले हुए पानी में धोकर उसे काम में लाना चाहिये नहीं तो तेज जन्तुनाशक घोल से हाथ में घाव होने का डर रहता है। काटते समय सावधानी से काटना चाहिये क्योंकि कभी कभी धोखे से बच्चे के तरफ़ के नाड़ पर चोट पहुँच जाती है। यह तीन से पांच या सात रोज सूखने और निकलने में लेता है।

३ शिशु की गर्मी बनाये रखना—यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात है क्योंकि अभी तक तो शिशु मां के पेट के अंदर ही बिना किसी दिक्कत के गरमी लेता रहता था पर अब जब कि वह पेट के बाहर है उसे गरम रखना हमारा काम हो जाता है, जचकी के दिनों में कमरे में अक्सर अंगीठी रखी जाती है। इससे कमरा तो गरम रहता ही है पर साथ ही साथ पानी आदि गरम करने में सहूलियत होती है। गर्मी के दिनों में अंगीठी अन्दर रखना ठीक नहीं है और ठंड के दिनों में वायु के आवा-गमन का प्रबंध होना चाहिये। कई जच्चा के पलंग के नीचे अंगीठी रखते हैं इससे कभी कभी पलंग [खासकर रस्सी या

निवार का] व बिस्तरे में ही नहीं बल्कि जच्चा के कपड़ों में भी आग लगते देखी गई है।

जैसे ही बच्चे का नाड़ काटा जा चुके उसे कंबल में लपेट कर (सिर ढका हो पर चेहरा खुला) उसे गर्म किये हुये बिस्तर पर लिटा देना चाहिये साथ ही उसकी गुदा व जननेन्द्रियों पर भी रुई और गाज का बना हुआ फालका या पोतड़ा डाल देना चाहिये। बच्चे के शरीर की गर्मी को हमें निकलने नहीं देना है क्योंकि इससे वह कमजोर हो जाता है।

४. पहिला स्नान— कम से कम एक घंटा आराम देने के पश्चात् बच्चे को नहलाना चाहिये। यदि बच्चा बहुत कमजोर हो तो उसे उस दिन नहीं नहलाना चाहिये। एक-दो दिन जैसी जरूरत हो वैसा ठहरा जा सकता है पर उसके शरीर पर लगा चिकना पदार्थ निकाल देना चाहिये यह चिकना पदार्थ मीठे तेल से निकल जाता है। कड़वा तेल भी उपयोग किया जाता है पर कड़ुवा तेल कभी कभी जलन पैदा करता है। गरम तेल ठंडा कर साफ शीशी में पहिले से रख लेना चाहिये। इसे रुई के बड़े से फोहे या हाथ से धीरे धीरे मला जा सकता है और फिर पोंछा जा सकता है।

इसके बाद गरम पानी से और अधिक स्निग्ध तत्व वाले या ग्लिसरिन युक्त साबुन (Superfatted or Glycerine Soap) से अच्छी तरह पर सहूलियत से स्पंज किया जा सकता है। उसे इस प्रकार नहलाया जाना चाहिये।

१. नर्स को साबुन से हाथ धो लेना चाहिये।

२. आंख, नथुनों और चेहरे को रुई के फोहे से साफ करे।

३. चेहरे को चेहरे पोंछने के ही खास गीले कपड़े से साफ करे और सुखाये।

४. साबुन लगे हाथों से हलके हलके पैर, हाथ, कमर और छाती को मले।


पहिला स्नान

५. टब में (चिलमची या तसले में) धीरे से गरम पानी में बच्चे का साबुन लगा हिस्सा ही डुबाये और धीरे धीरे मलकर साबुन छुड़ा दे।

६. चेहरे को नीचे की ओर कर सूखे तौलिये से शरीर को थपथपा कर, रगड़ कर नहीं, सुखाये।

७. फिर बच्चे को सूखे तौलिये पर पीठ के बल लिटा बगल, जांघ और गले को पोंछे और सुखाये। इनकी सिकुड़न को गीला न रहने दे।

८. नाड़ की पट्टी करे। इसे बिलकुल सूखा रखने की कोशिश की जानी चाहिये। नाड़ को सुखाकर उसके ऊपर डस्टिंग पाउडर अच्छी तरह भुरक देना चाहिये। फिर ५" चौरस लिंट या मलमल का टुकड़ा लेकर उसे बाजू से बीच तक थोड़ा काट देना चाहिये फिर धीरे से नाड़ को खिचाव न देते हुये उठा कर इसे उसके नीचे सरका देना चाहिये जिससे नाड़ लिंट पर ही रहे। थोड़ा सा पाउडर भुरक देना चाहिये। नाड़ को लिंट से ढक देना चाहिये और फिर नाड़ पर पट्टी को पेट और पीठ पर

लपेटकर बांध देना चाहिए। पट्टी में सबसे अच्छा टांके लगाना है, फिर सेफ्टी पिन और नहीं तो बगल में गठानें लगाई जावें।

९. शरीर पर हलका पाउडर लगावे पर इसकी आवश्यकता नहीं है। पाउडर नाड़ू की पट्टी के बाद ही लगाया जावे जिससे धोखे से भी नाड़ू पर झटका न पड़े।

१०. अब कपड़े पहिनाये जा सकते हैं अथवा एक बड़े तौलिये, कथड़ी, रुईदार बड़े कपड़े या नरम कंबल में शिशु लपेटा जा सकता है तथा सिर और माथा एक कपड़े से बांधा जा सकता है। पर इससे बच्चे के हाथ पैर हिलाने की स्वतंत्रता चली जाती है। उसके बने हुए मौसम के अनुसार बने हुए कपड़े पहिना देना चाहिये।



आंख में दवा छोड़ना बहुत जरूरी है।

११. आंख में दवा छोड़ कर अब बिस्तर पर उसे लिटा दे। यदि ठंड हो तो बिस्तर के नीचे गरम पानी की थैली रख देना चाहिये पर देख लेना चाहिये कि वह अधिक गरम न हो और उसका ढक्कन कसकर लगा हुआ हो जिससे गरम पानी बह न निकले।

जरूरत न होने पर अधिक लपेटने से बच्चों का तापमान १०५° फै० तक बढ़ता देखा है और उन्हें फिट आने लगते हैं।

१२ बिस्तर समेत वजन लेना चाहिये। कपड़ों को पहिले या बाद में तौल कर बच्चे का वजन निकाला जा सकता है। नहलाने, कपड़े पहिनाने और बिस्तर में ठीक तरह से लिटाने में २० मिनट से अधिक नहीं लगना चाहिये।

सावधानियां—१. जिसने कभी छोटे बच्चे को ध्यानपूर्वक नहीं देखा है उसे जानकर यह ताज्जुब होगा कि बच्चे के सिर में दो नरम जगहें होती हैं। ये सिर की हड्डियों के न जुड़ने से रहा करती हैं। बड़ी सिर के ऊपर और छोटी पीछे रहा करती है। छोटी लगभग छह माह और बड़ी लगभग डेढ़ साल में बन्द हो जाया करती है। इस तरह की बनावट में प्रकृति का एक भेद छिपा रहता है। यदि सिर थोड़ा सा बड़ा भी रहता है तो सिर की हड्डियां थोड़ा इधर उधर सरक जाती हैं और सिर योनि मार्ग से निकल आता है। बाकी धड़ निकलने में कोई कठिनाई नहीं रहती क्योंकि शिशु के सिर का नाप ही शरीर के सब नापों से बड़ा रहता है। बच्चे को इन नरम जगहों पर संभालते समय दबाव नहीं पड़ने देना चाहिये।

२. कभी कभी सिर बड़ा होने से, योनि मार्ग तंग होने से या जचकी में अधिक समय लगने से बच्चे के सिर या शरीर में नीले चिन्ह, अस्वाभाविक उठापन, या गड्ढ आ सकते हैं। कभी कभी तो बच्चा सफेद या नीला पड़ जाता है उसकी सांस भी नहीं निकलती है और निकलती भी है तो बहुत कष्ट से। ऐसी दशा में स्पिरिट अमोनिया एरोमेट [Spirit Ammonia Aromat] की कुछ बूंद एक कपड़े में डालकर नाक के सामने रखना व छाती को धीरे धीरे दबाकर कृत्रिम सांस देना चाहिये। चिकित्सक को खबर देना चाहिये।

३. बच्चे की जननेन्द्रिय व गुदा को देखना चाहिये। कभी कभी ये बन्द रहा करते हैं। यदि लिंग का चमड़ा थोड़ा ही सरकता हो तो उसे रोज तेल लगा धीरे धीरे सरकाना चाहिये फिर दो हफ्ते के बाद हफ्ते में दो समय, फिर हफ्ते में एक एक समय। इस तरह वह ठीक हो जाता है। चिकित्सक शिश्न चर्म (Prepuce) के बंधनों को भी तोड़ सकता है पर अधिकतर न इसकी और न आपरेशन की जरूरत पड़ती है। गुदा द्वार बन्द होने पर तो तुरन्त कुछ न कुछ करना पड़ता है। कभी कभी गोलियां (वृषण, Testicles) भी पोते [अंड कोष] में उतरे नहीं होतीं। यह कभी कभी जरा देर में उतरते हैं। यदि बाद में न उतरे तो कुछ सालों के बाद योग्य चिकित्सक से सलाह लेना चाहिए।

४. बच्चे के शरीर के शरीर पर कई समय फुन्सियां रहती हैं। ये उपदंश की भी हो सकती हैं। ये किसी किस्म की भी हों इनका शीघ्र ही इलाज करना जरूरी है।

५. आंख की सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिये यदि सिलवर नाइट्रट १% डाला गया है तो कभी कभी ८ घंटे के बाद सूजन आ जाती है। इसे आगन्तु-पूयमेह से हुई न समझ बैठना चाहिये। यह बोरिक लोशन से धोने से ही दूसरे दिन मिट जाती है।

६. यदि जचकी सातवें से नवें महीने तक किसी कारण वश हो जाय तो शिशु के लालन पालन में बहुत अधिक सावधानी

बरतना चाहिये। उसे गर्म रखना चाहिये। ऐसे शिशु को अकालीन शिशु (Prematrue child) कहते हैं। इस विषय पर आगे लिखा गया है।

७. शिशु की देखभाल नियमित होना चाहिये जिससे कि उसे बराबर समय पर आराम व सोने की आदत पड़ जाय।

८. कुछ को पीलिया हो जाता है पर यह तीसरे चौथे दिन अपने आप ठीक हो जाता है पर यदि ठीक न हो तो चिकित्सक से सलाह लेना उचित है।

९. कभी कभी छातियां सूजी हुई रहती हैं ये भी अपने आप बैठ जाती हैं दाइयें इन्हें अक्सर दबाने की कोशिश करती हैं। उन्हें ऐसा कभी मत करने दीजिये। इसी तरह किसी किसी की योनि से खून सा निकलता है। यह भी अपने आप बन्द हो जाता है। सफाई पर विशेष ध्यान रखिये।

१०. जन्म की सूचना पुलिस और गांव व नगर सभा कार्यालय को देना चाहिये।

नीला या सफेद शिशु—यदि जचकी बहुत समय ले लेती है और बच्चा योनि मार्ग में दबा पड़ा रहता है तो उसका रंग सफेद या नीला पड़ जाता है। ऐसे समय चिकित्सक के आने तक नीचे लिखे उपाय करना चाहिये।

१. यदि बच्चा नीला है तो नाड़ की धड़कन बन्द हो जाने के बाद और यदि सफ़ेद है तो उसी समय उसे बांधो और काटो।



शिशु को लटकाना

२. टिहुनों [ankles] से पकड़कर बच्चे को लटकाओ जिससे मुंह के अन्दर जो भी कुछ हो निकल आवे।

३. शिशु के शरीर को, सिर को बाहर संभालते हुए, १००° फै० गरम पानी में रखो। इस समय उसके मुंह में से चिकना पदार्थ उबली और साफ की हुई एक नलिका के द्वारा मुँह या पिचकारी से खींचो।

४. पानी के बाहर निकालो, हलके हाथों से जल्दी सुखाओ और गरम कंबल में लपेटो। यदि मुंह में चिकने पदार्थ का शक हो तो फिर से टिहुने पकड़कर लटकाओ।

५. यदि सांस आ जावे तो ठीक नहीं तो कृत्रिम श्वासोच्छ्वास (artificial respiration) चालू करो और दो तीन बूंद ब्रांडी मसूड़ों में मल दो।

———



नवजात शिशु फूल की कोमल पंखुड़ी होता है। उसकी देखरेख बहुत ही सावधानी व कोमलता से करना चाहिये।

शिशु की प्रगति

पैदा होते ही शिशु हलके गुलाबी रंग का रहता है पर जैसे ही वह चिल्लाता है शुद्ध वायु के प्रवेश करने ही उसका रंग गुलाबी हो जाता है। आंखों का रंग हलका नीलापन व स्लेटीपन लिये रहता है। कुल लम्बाई १९-२० इन्च रहती है, बठने में लगभग १४ इन्च, छाती १३ इन्च और सिर व पेट का घेरा लगभग १४ इन्च रहता है। वह बहुत ही चुस्त व हाथ पैर हिलाने में तेज रहता है।

१. वजन—तनदुरुस्त बच्चे का वजन लगभग तीन से चार सेर तक रहता है। भारत में औसतन शिशु तीन सेर का रहता है। बालिका कुछ कम और बालक का कुछ अधिक वजन रहता है।

पहिले दो तीन दिन में वजन लगभग आधा पौंड कम होता है पर एक से दो हप्ते के बाद उसका जन्म का ही वजन होता है। छठवें माह के अन्त तक उसका वजन दुगुना हो जाता है और फिर लगभग एक पौंड हर माह के हिसाब से बढ़ना चाहिये। एक साल के बालक का वजन २०-२१ पौंड चाहिये। याने उसका १३-१४ पौंड वजन बढ़ना चाहिये। दूसरे साल में ६ से ८ तीसरे में ५ और चौथे में ४ पौंड वजन बढ़ना चाहिये। यदि वजन ठीक तरह से नहीं बढ़ रहा है तो उसकी उचित जांच व चिकित्सा करानी चाहिये।

२. पायखाना—शिशु की टट्टी गाढ़ी हरी काली सी और

चिकनी रहा करती है इसे अंग्रेजी में Meconium कहते हैं। तीसरे दिन से इसका रंग पीला हो जाता है। दिन में शिशु दो-चार मरतबा टट्टी जाता है। एक माह के बाद दिन में तीन समय ही जाता है। कभी कभी एक दिन की आड़ में भी टट्टी जाता है पर यदि वह रोता नहीं है, उसकी नींद और वजन बढ़ना बराबर है तो चिन्ता की जरूरत नहीं है। टट्टी के लिये सबेरे, दोपहर और शाम को बैठाना चाहिए। बड़े होने पर जितनी जल्दी हो सके इसकी नियमित आदत डालना ठीक है। कमोड़ वालों को चाहिए कि वे बच्चे को छाती पर टिका कर उसके चूतड़ से कमोड या छोटे से चिलमची का ठंडा किनारा लगने दें। दूसरों को चाहिए कि वे अपने पैरों को जमीन पर तिरछे रखें और बच्चे के पेट को इनसे टिकायें, चूतड़ दोनों पंजों पर हो, गुदा दोनों पंजों के बीच में हो। पैरों पर बहुत देर तक बैठालना, बार बार बैठालना या इस समय खिलौने देना खराब बात है।

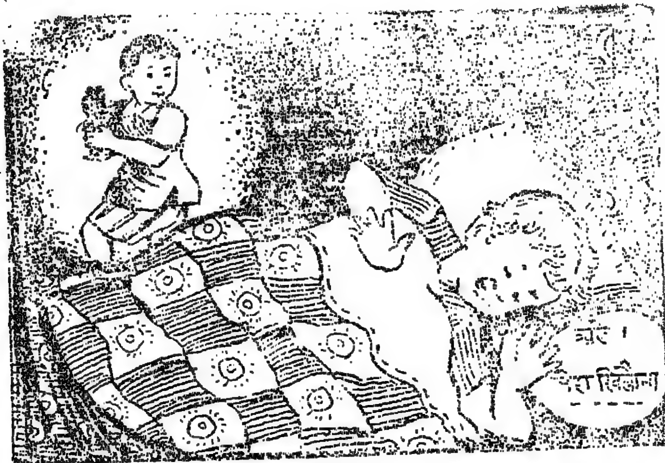
३. नींद-क्योंकि पहिले छह महीनों में शिशु का वजन दुगुना होता है उसकी नींद काफी होनी चाहिए। पहिले महीने तो बच्चा लगभग दिन रात सोता ही रहता है। केवल दूध पीने, नहाने कपड़े पहिनने आदि के लिये उठता है। बड़ा होने पर उसे सबेरे लगभग ८ बजे से सोने की आदत डालना चाहिये और लगभग १०-११ बजे जागने पर रात में उसकी नींद लगातार होना चाहिये। इसलिये शुरू से रात में दूध पिलाने की आदत न डालना चाहिये। सबेरे अर्थात दोपहर के पहिले एक नींद लेना तो पांच छह वर्ष की उमर तक चालू रखना चाहिये बच्चे की बाढ़ और शांत प्रकृति के लिये यह आराम बहुत लाभदायक होता है। जागने और नींद के घंटों में यह अनुपात बताया गया है। (टरबी किंग)

उमर	नींद घंटों में	जागना घंटों में
१ माह	२१	३
६ ,,	१८	६
१ साल	१५	९
४ ,,	१३	११
६ ,,	१२	१२
८ ,,	११	१३

४. बोलना—इसमें बड़ा अन्तर पाया जाता है । पहिले वर्ष में अलग अलग शब्द बोलता है पर दो वर्ष में छोटे छोटे सरल वाक्य बोलना शुरू करता है ।

५. व्यायाम और विनोद व बैठना चलना—पहिले माह में तो शिशु की दूध पीने, कपड़े पहिनने, नहाने आदि में काफी कसरत हो जाती है। दूसरे मास में दिन में एक समय शिशु को माँ या धाय की गोद में हाथ पैर चलाने का मौका देना चाहिये। इसके बाद उसे किसी गुदगुदे सोफा या नरम जगह पर हाथ पैर मार स्वतंत्रता पूर्व खेलने देना चाहिये। शिशु पहिले सप्ताह के बाद रोशनी की तरफ देखना शुरू करता है और एक माह के बाद तो आसपास की चीजों में दिलचस्पी लेता है। छठवें हफ्ते के लगभग पहिले पहल मुस्कराता है।

इस समय क्या बाद में भी उसे उत्तेजित नहीं करना चाहिये क्योंकि स्नायु मंडल अभी इतनी तेजी नहीं सह पाता है। हर कोई शिशु की निर्मल हंसी को देखना चाहता है। पर यह ध्यान रखना चाहिये कि उनके अधिक उत्तेजित होने से ही वे रात को सोते समय बड़बड़ाया करते हैं। चौथे माह से वह चीजें पकड़ना चाहेगा तथा सिर भी उठायेगा और आठवें माह में बैठेगा। वह



दिन में अधिक उत्तेजित होने पर बालक सोते समय बड़बड़ाते हैं

दसवें या ग्यारवें माह में रेंगना [हाथ पैर के बल पर] और १४ वें व १६ वें माह में चलना शुरू करता है। [परिशिष्ट देखिये]

६. दाँत और मुँह की सफाई—दांत निकलने का समय भी भिन्न भिन्न रहता है। पैदा होते समय वे मसूड़ों के नीचे रहते हैं छठवें व नवें माह में वे निकलते हैं और दो साल में २० दांत निकल आते हैं। देर से दाँत निकलना अकसर सूखी रोग की निशानी रहती है। जब बच्चे के आठ दाँत निकल आंय तब से दाँत साफ करने की आदत शुरू करा देनी चाहिये। सुलाने के पहिले मध्यम कड़े ब्रश को मसूड़ों से दाँतों की धार की ओर फेरना चाहिये। इस समय पाउडर का उपयोग रुई के फोहे या उंगली से किया जा सकता है। वैसे टुथ-पेस्ट अच्छी रहती है क्योंकि इसमें खुरदरे तत्व नहीं रहते ।

खाने का सोडा सबसे उत्तम और आसानी का मंजन है क्योंकि बच्चा न तो इसे खावेगा और न ही यह स्वाद में इतना खराब है। बेहतर होगा कि मां भी बच्चे के साथ दांत साफ किया करे। नाक छिनकना व कुल्ला करना भी उसे बताना चाहिये। यह सब खेल खेल में हो न कि बन्धन के रूप में। पौने दो साल का साधारण बच्चा इन्हें सीख लेता है।

दाँत निकलने समय बच्चों को अलग अलग किस्म की तकलीफें हुआ करती हैं। किसी की लार अधिक बहती है तो किसी को दस्त लगते हैं, तो किसी को जुकाम सर्दी हो जाता है। जितनी अधिक लार गिरती है उतनी ही कम तकलीफ बच्चे को होती है। ऐसे समय में यदि बच्चे को लकड़ी की मुठी या गोल की हुई हड्डी चूसने को दी जाय तो अच्छा रहता है। इनके चबाने से मसूड़ों में खून का दौरा अच्छा रहता है जिससे दांत निकलने में बच्चे को कम कष्ट होता है । और साथ ही वह चबाना भी सीखता है।

दूध के दांत निकलने का क्रम साधारणतयः इस प्रकार का होता है।

दांत	कब निकलते हैं
बीच के काटने वाले नीचे	६–८ माह
,, ,, ऊपर	७-६ माह
बगल के काटने वाले ,,	६–१० माह
,, ,, नीचे	१०-१३ माह
पहिली दाढ़ें	१२–१४ माह
खूंटे [सुए Canines]	१७–२० माह
दूसरी दाढ़ें	२४–३६ माह

७. भोजन—उचित भोजन के विषय में जितना लिखा जाय उतना ही कम है। यह तो स्वास्थ्य की नींव है। साथ ही इसकी उचित आदत डालना हर मां बाप का कर्तव्य है क्योंकि इससे भोजन की ही नहीं, भविष्य की बहुत सी कठि ाइयां अपने आप दूर हो जाती हैं। बालक मनचला हठीला आदि बनने से बच जाता है। कभी कभी अधिक थकावट से भूख नहीं लगती ऐसे समय भोजन के लिये जबरदस्ती नहीं करना चाहिये।

कहा जा चुका है कि माता का दूध पूर्ण रूप से केवल चार माह तक ही बच्चे को तन्दुरुस्त रख सकता है। बाद में हमें ताकत के लिये उसे कुछ न कुछ देना चाहिये। हमारे यहां छठवें माह में अन्न-प्राशन संस्कार किया जाता है और आधुनिक विज्ञान का भी मत है कि छह माह की आयु के पश्चात कड़े दाने-दार अथवा अपाच्य भोज्य पदार्थों को छोड़ शिशु और युवक की पाचन क्रिया में कोई विशेष अन्तर नहीं होता है।

जीवन तत्व 'सी' बहुत ही महत्व पूर्ण चीज है और यह सन्तरे के रस में मिलता है। पहिले माह में एक छोटा चम्मच दूसरे में दो छोटे चम्मच और चौथे माह से तो आधी छटाक दिया जा सकता है। इसके कम होने से मसूड़े फूले रहते हैं।

निम्न लिखित पदार्थ भी आयु व स्वास्थ्य के अनुपात में देना चाहिये :—

मछली का तेल—दूसरे माह

अन्डे का पीला भाग, गेहूं या जवा के आटे की पतली लप्सी, पका और काट के भुरता किया हुआ (mashed) केला— तीसरे माह।

आलू, गाजर का कुछ गाढ़ा छना रस—पांचवें माह रोटी की कड़ी पपटी, अन्डा (यदि पच सके) — छठवें माह के पश्चात्।

मांस— २ साल के पश्चात।

कुछ सावधानियां— अ. अकेले नहीं छोड़ना चाहिये—शिशु को अकेला नहीं छोड़ना चाहिये क्योंकि अभी तक अर्थात् गर्भ में तो वह पूर्ण रूप से सुरक्षित था पर अब वह असहाय



शिशु को अकेले नहीं छोड़ना चाहिये

है। माता को चाहिये कि उसे वह अपनी नजरों के सामने ही रखे। इधर उधर काम करते हुए जब वह सोता नहीं हो तब उसे आवाज देती रहे जिससे उसे उसकी उपस्थिति मालूम होती रहे।

ब. उसे हर जगह न ले जाओ— जहां पर शुद्ध हवा उसके लिये वरदान है वहां पर दूषित हवा उसके लिये शाप है। रोगियों के घरों, भीड़ भाड़ में व सिनेमादि उसे नहीं ले जाना चाहिये।

स. अफीम— कई माताएं विशेष कर मजदूर वर्ग बालकों को शान्त रखने के लिये इसका सहारा लेती हैं। यह नहीं चाहिये। यह स्वास्थ्य तो बिगाड़ती ही है पर धोखे से इनकी मौत का कारण भी बनती है।

ड. चूसनी— (Dummy) मध्यम वर्ग बच्चे को शांत रखने के लिये इसका उपयोग करते हैं। एक तो यह गन्दी आदत है। दूसरा बच्चे के जबड़े की बनावट व दांतों के उगने पर इसका खराब प्रभाव पड़ता है तथा तीसरे वह इससे कुछ हवा भी चूस लेता है जिससे उसका पेट भी फूल जाता है।

इ. दवाइयां— शिशु कोमल तो रहता है। घरों में दवाइयां बच्चों की पहुँच के बाहर रखना चाहिये। कुनाइन की शक्कर लिपटी गोलियां (Sugar coated quinine tablets) से भी बच्चों की मौत होती देखी गई है। बिना उचित सलाह के कोई भी दवा देना ठीक नहीं है। दवाइयों के विषय में इतना जानना आवश्यक है।

(क) दवा की जितनी खुराक जिस तरह और जितने समय के अन्तर से बताई गई हो ठीक वैसे ही देना चाहिये।

(ख) नींद, दस्त बंद करने व खांसी की दवा में यदि बच्चा ऊंघता हो तो चिकित्सक से पूछकर दवा देना चाहिये क्योंकि कई चिकित्सक इसमें अफीम या अफीम का सत मिलाते हैं।

(ग) कब्जियत में अन्डी का तेल देना या ग्लिसरीन की बत्ती गुदा में बार बार देना ठीक नहीं है। ये अक्सर अंतड़ियों में जोर देकर बाद में शिथिलता पैदा करते हैं। इसके लिये पेराफिन लिक्विड, मिल्क आफ मैग्नीशिया या अन्जीर का शरबत उचित मात्रा में ठीक रहता है।

(घ) हाजमे के लिये कोई दवा देना ठीक नहीं है। हाजमा दूध में व भोजन में रद्दोबदल कर ठीक कर लेना चाहिये। घुटी व ग्राइप वाटर सरीखी दवाइयों का रिवाज सा चल पड़ा है। घुटी घर में भी बनाई जाती है जिसमें उसकी भिन्न भिन्न दवाइयों का अनुपात सबको सही सही नहीं मालूम होता है— इस तरह से ये हानि भी पहुँच सकती हैं। यही हाल ब्रांडी का है। इन सबका उपयोग बिना चिकित्सक की सलाह के नहीं होना चाहिये।

(फ)लोरियां—हम बच्चों को नासमझ समझ बैठते हैं। उनके सामने कुछ भी बोलते-बकते हैं। यह ठीक नहीं है। लोरियों में भी यदि हम सुन्दर अर्थ मय गीत रखने का प्रयत्न करेंगे तो इससे हमारा ही नहीं बालक का भी विकास होगा।

शिशु की प्रगति का अर्थ है राष्ट्र की प्रगति।

दूध पिलाना

मां का दूध— हर जीव का दूध अपने ही बच्चे के लिये खास तौर से विशिष्ट रूप से (Specific) अच्छा रहता है। कुदरत बच्चे के अंगों की बनावट के अनुकूल ही मां के दूध को बनाती है— उसमें इस तरह के पदार्थ डालती है कि जिससे वह जल्द ही पच जाय। गाय के दूध की बनावट का भी यही हाल है। शुरू में बछड़ों के पेट के मुख्य दो भाग और बाद में चार भाग हो जाते हैं जिससे गाय के दूध के भारी नत्रजन पदार्थों (Proteins) के बड़े व कड़े थक्के (Curds) आसानी से पच सकें। इसीलिये एक जीवधारी का शुद्ध दूध दूसरे जीवधारी के बच्चे के लिये ठीक ही नहीं हानिकारक भी होता है।

बच्चे पैदा होने के बाद बच्चे के संबंध मां के साथ वैसे ही रहते हैं। वह उससे अलग तो हो जाता है पर भोजन के लिये उसी पर आश्रित रहता है। यहां पर हमें ध्यान रखना है कि मां, पौष्टिक व संतुलित भोजन मिलने पर भी, अपने दूध से बच्चे को ४-६ माह तक ही बच्चे की बाढ़ के लिये अच्छा दूध दे सकती है। इसके बाद बच्चे को ऊपर से अन्य तत्वों की आवश्यकता रहती है। साथ ही कई समय माता के दूध कम निकलता है पर आंचल के दूध से ही बच्चे को दूध पिलाना शुरू करना चाहिये चाहे हमें बोतल से ही दूध पिलाना पड़े। मां के दूध के दूसरे भी लाभ हैं।

१— शरीर की गर्मी पर ही बच्चे को दूध मिलता है।

२- ऊपरी दूध के बनाने में न कष्ट और न खर्च ही करना पड़ता है।

३- आंचल की सफाई कर लेने से बाहिरी अशुद्धता का डर नहीं रहता है।

४- बच्चे की पाचन शक्ति के अनुकूल रहता है। उसमें स्निग्ध पदार्थ (Fats) कम व शर्करा तत्व (Carbohydrotes) शक्ति देने वाली चीज अधिक रहती है। नत्रजन पदार्थ (Proteins esplaetalbumin) के थक्के नरम होते हैं जो बच्चा पचा लेता है। बाढ़ के लिये अन्य चीजें लोहा, चूना, जीवन तत्व (Vitamins) आवश्यक मात्रा में रहते हैं।

५- सही ममता बाढ़ में सहायक होती है। सही ममता इसीलिये कहा गया है कि बच्चे के जीवन का पहिला पखवाड़ा (दो हफ्ते) उसके जीवन की नींव का काम करता है। यदि इस समय उसकी ठीक तरह से देख-भाल की गई तो उसकी इस समय की ही नहीं आगे की बाढ़ भी ठीक रहेगी।

६- दूध पीने से दूध खींचते समय बच्चे की कसरत होती है व उसके जबड़े की बनावट भी अच्छी रहती है।

७- चेंप- जचकी के दो तीन दिन के बाद ही ठीक तरह से दूध निकलता है। इस बीच में गाढ़ा गाढ़ा (जचकी के कुछ महीने पहिले से ही) पदार्थ जिसे चेंप (Colostrum) कहते हैं निकलता है। इसमें नत्रजन पदार्थ दूध से पांच छह गुना रहते हैं जो बाढ़ के लिये अच्छे रहते हैं, स्निग्ध पदार्थ कम रहते हैं पर इसमें सबसे अच्छी चीज यह है कि यह दस्तावर होता है जिससे बच्चे की अंतड़ियां अपने आप साफ हो जाती हैं।

दूध निकलने के बाद—

१. पहिले पहिले दूध पिलाना—— जचकी के बाद जच्चा अक्सर लस्त पड़ जाती है। उसे आराम की जरूरत रहती है। पहिली देखभाल के बाद उसे और बच्चे को ६ से १० घंटे तक बिलकुल आराम देना चाहिये। इसके बाद बच्चे को आंचल से लगाना चाहिये।

इस समय आंचल को अच्छी तरह उबले हुए कुनकुने पानी से साफ कर लेना चाहिये। यदि आंचल की पहिले से देखभाल की गई होगी तो इस समय की सफाई में कोई विशेष बात नहीं रहती, नहीं तो उसमें विशेषकर चूचुक (चूची) पर अक्सर चेंप की बूंदें जम जाया करती हैं और वे उसके छेदों को बन्द कर देतीं हैं जिससे गाढ़े चेंप को नवजात शिशु खींच नही सकता। इन्हें गरम पानी से भिगो कर धीरे धीरे निकाल लेना चाहिये और उंगली और अंगूठे के बीच चूची को दबा कर और धार निकाल कर भी देख लेना चाहिये।

जब यह सब हो जाय तो बच्चे को उठा लेना चाहिये। उसके सिर को सहारा देना चाहिये तथा साफ और हल्के हाथों से उसका मुंह खोल उसमें चूची डाल देना चाहिये। अक्सर बच्चा इस समय दूध खींचना शुरू कर देता है। यदि दूध नहीं खींचे तो चूची पर दो बूंद शहद लगाया जा सकता है, दूध की धार भी मुँह के अन्दर डाली जा सकती है। कई बच्चे सुस्त रहते हैं उन्हें थोड़ा सा हिलाकर जगाना भी पड़ता है। फिर अगले चौबीस घन्टों में ४ से ६ घंटे के अन्तर से उसे आंचल से लगाना चाहिये। इस समय ही क्या

लगभग पहिले माह भर तक बच्चा अधिकतर सोता ही रहता



आंचल से दूध पिलाना

पीठ व सिर पर आसरा दे समय पर दूध पिलाना चाहिये।

है और दूध पिलाने के लिये उसे उठाना ही पड़ता है।

२. कौन सा आंचल ?—यह तो शिशु के दूध पीने और माता के दूध उतरने पर निर्भर रहता है। यदि दूध की मिगदार काफी है तो एक ही आंचल का दूध काफी होता है। यदि दूध बराबर नहीं उतरता है तो उसे दोनों आंचलों का दूध कम पड़ सकता है। यदि शिशु दूध नहीं पीता है और आंचल को लेकर चुपचाप सो जाता है तो आध घंटे में भी उसका पेट नहीं भरेगा। साधारण तौर पर एक ही आंचल का दूध शिशु को काफी होता है, पर पहिले थोड़े दिनों तक उसे दोनों आंचलों से लगाना चाहिये। औसतन १५ मिनिट ही शिशु दूध पीता है। यदि बच्चा एक ही आंचल से दूध पीता है तो भी दूसरे आंचल का दूध निकाल देना चाहिये।

३. दूध का बराबर उतरना— मातायें अक्सर कहा करतीं हैं कि उनके बच्चे दूध बराबर नहीं पीते, वे भूखे रहते

हैं या उनके दूध की मिगदार ही कम है। अधिकतर ये शिकायतें उन माताओं में मिलती हैं जो या तो बराबर पौष्टिक भोजन नहीं करतीं, पानी कम पीती हैं अथवा बच्चों को उचित ढंग से दूध नहीं पिलातीं।

४. उचित ढंग से दूध पिलाना— इसका मतलब है कि बच्चे को लगभग ठीक समय पर दूध पिलाया जाय और पिलाते समय पूर्ण शांति रखी जाय। कोई सहेली आ गई तो आप तो गप्पे कर रहीं हैं और बच्चे का मुंह ढांक कर आंचल उसके मुंह में ठूंस दिया। इससे माता का कर्तव्य पूरा नहीं होता। यदि बच्चे ने दूध पिया तो ठीक, नहीं तो उसे एक आध धप्प जमा दी, उसे अलग बैठा या लिटा दिया और दो चार गालियां (?) सुना दीं। यह बिलकुल अन्याय है।

दूसरा अन्याय अपने साथ होता है और वह यह कि जब बच्चा दूध पी चुके तब आंचल में बचा हुआ दूध अंगूठे और उंगली के बीच चूची को दबा दबाकर निकाल देना चाहिये नहीं तो भरा हुआ दूध दूध बनाने वाली ग्रन्थियों पर दबाव डाल उन्हें कमजोर करता है जिससे बाद में दूध कम उतरता है। आंचलों को खाली कर लेना ही दूध उतारने की सबसे बढ़िया दवा है।

५. लंघन का बुखार (Inanition Fever)— अक्सर देखा जाता है कि दो तीन दिन बाद शिशु को कुछ बुखार सा आ जाता है जिन बच्चों को थोड़ा थोड़ा उबला छना शरीर के ताप पर पानी दिया जाता है उन्हें यह नहीं होता। इसका मुख्य कारण शिशु का भूखा रहना ही है। कभी कभी इसमें दस्त भी लगने लग जाते हैं।

६. माता का भोजन— इस पर विशेष बन्धन नहीं है पर भोजन मन पसन्द, पाचक और पौष्टिक होना चाहिये।

७. दूध छुड़ाना— बच्चे को दूध प्यारा होता ही है। यही तो उसका भोजन है। थोड़े दिनों के बाद दूध पीना केवल भोजन प्राप्ति का साधन ही नहीं एक आदत सी हो जाती है। जसा कहा गया है कि चौथे माह के पश्चात् उसकी बाढ़ के लिये केवल माता का दूध अकेला ही काफी नहीं होता है। बच्चा भोजन के लिये मां पर आश्रित भी रहता है। इस तरह मां को भी एक प्रकार बंधन हो जाता है। इस प्रकार दूध छुड़ाना दोनों को ही लाभदायक होता है। यदि माता के बहुत अधिक दूध होता हो तो दूध पिलाना कोई खराब नहीं है पर शिशु की स्वतन्त्र मनोवैज्ञानिक प्रगति के लिये दो साल में छुड़ा देना ही चाहिये अच्छा हो कि यदि छठवें माह से ही बराबर बाढ़ के लिये ऊपर से कुछ पौष्टिक तत्व दिये जावें। जब शिशु को छठवें माह से कुछ देना ही है तो इस समय से क्रमशः एक एक समय में ऊपरी दूध का उचित मिश्रण देना ठीक है। इस प्रकार दूध लगभग दो से चार माह में शिशु को बिना मालूम किये व व तकलीफ दिये छुड़ाया जा सकता है।

८ मां का दूध कब न दिया जाय?—कई समय माता का दूध शिशु के लिये अहितकर होता है। इनमें से कई अवसरों पर तो रोग के कारण शिशु को मां के पास से अलग करना ही ठीक रहता है और कई समय दूध ही नहीं उतरता व चूची की बनावट ही इस तरह की रहती है कि जिससे शिशु का दूध पी सकना सम्भव नहीं रहता। इस प्रकार इन परि-

स्थितियों को निम्नलिखित दशाओं में बांटा जा सकता है।

१. जब शिशु को बिलकुल ही दूध न दिया जाय—माता का पागलपन व क्षय (संवाहक स्थिति में) व कुकर खांसी से पीड़ित होना, दूध का न उतरना उलटी हुई चूचियां (Inverted nipples)।

२. जब थोड़ा बहुत दूध पिलाया जा सकता है। रक्त की कमी (Anaemia) मृगी, (Epilepsy), हृदय, गुर्दे, व निमोनिया की बीमारी तथा फटी हुई (Cracked) चूचियां।

३. सावधानी से—जुकाम सर्दी में माता को चाहिये कि दूध पिलाते समय अपना मुंह शिशु की ओर न रखे और अपने मुँह या शिशु को तौलिये से ढांक ले। दूध पिलाने के पहिले हर दशा में हाथ धो लेना ठीक है।

यही सावधानी माता के घट-सर्प से पीड़ित (Diphtheria) होने पर बरतनी चाहिये पर साथ ही शिशु को प्रतिरोधक सुई (Prophylactic dose) भी लगवा देना चाहिये। खसरा प्रथम तीन चार माह की आयु में नहीं हुआ करता इसलिये इस रोग में इस समय तक दूध पिलाया जा सकता है पर खांसी आदि से शिशु का बचाव करना ही चाहिये।

६ मासिक धर्म शुरू होने पर या होते समय दूध बन्द करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

ऊपरी दूध पिलाना—यह तो बताया ही जा चुका है कि हर प्राणि-वर्ग के लिये अपनी ही माता का दूध उचित बैठता है। यह भी याद रखना चाहिये कि जो माता सन्तान पैदा कर सकती

है वह दूध भी पिला सकती है पर इसके अपवाद भी बतलाये जा चुके हैं। साथ ही माता के दूध के पोषक तत्व भी ४ माह की आयु के बाद के शिशु के लिये कम पड़ते हैं इसलिये इसके बाद ऊपरी दूध के रूप में उसे कुछ न कुछ देना ही होगा।

१. धाय (Wet nurse) जब माता का दूध न पिलाया जा सके तो हमें उसी जाति का दूध उचित मालूम पड़ता है। इसके लिये लोग अक्सर किसी दूसरे बच्चेवाली स्त्री को घर में नौकर रख लेते हैं जो अपना दूध अपने और स्वामी के बच्चे को पिलाती है। ऐसी नौकरानी को धाय कहते हैं। यह जरूरी है कि इसे स्वस्थ होना चाहिये। क्षय, रक्त की कमी, उपदंश, आगन्तुपूयमेह Gonorrhoea) आदि का शक होने पर इनकी जांच करा लेना चाहिये साथ ही उसके व उसके बच्चे के दृष्टि कोण से स्वामी के बच्चे को भी उपदंश से पीड़ित नहीं होना चाहिये।

उसका दूध पौष्टिक रखने के लिये उसके संतुलित भोजन का प्रबन्ध होना चाहिये तथा उत्तम होगा कि उसे अपने यहां स्वस्थ और साफ जगह में ही रखा जाय। उसके साथ उसका बच्चा भी रखा जाय जिसके कि वह अपने आंचल का दूध पूरी तरह से पिलाये और उसमें कुछ न बचे क्योंकि तभी तो उसे बराबर दूध उतरता रहेगा।

२. दूसरे प्राणियों का दूध— जब धाय नहीं रखी जा सकती फिर हमें दूसरे प्राणियों का दूध पिलाना पड़ता है और इन प्राणियों का उपयोग तो भौगोलिक आधार पर ही होता है। मुख्यतः गाय, भैंस और बकरी का ही दूध उपयोग में आता है। ऊंटनी गधी, मादा रेनडियर का भी दूध उपयोग में लिया जाता है।

दूसरे जीवधारी और मानव के दूध के मिश्रण में बहुत अन्तर होता है। माता के दूध सराखा इनका मिश्रण व पाचक बनाना कोई सरल कार्य नहीं है। दूध की शुद्धता तथा कीटाणुओं से रक्षा करने की अलग कठिनाइयां हैं। इन दूधों का प्राकृतिक मिश्रण निम्न प्रकार है। इससे सिद्ध हो जाता है कि कोई भी दूध नवजात शिशु के लिये माता के दूध सरीखा पौष्टिक व आसानी से पचने वाला नहीं है।

१०० हिस्सों में	प्रोटीन	स्निग्ध	शर्करा	धातु
मानव	१·२५	४	७	·२५
गाय	३·५	४	४·५	·७५
बकरी	३·५	४	४·५	·६
गधी	१·२५	१	६	·४५
भैंस	४	७·१	४	·८

क्योंकि बच्चों को पिलाने के लिये अधिकतर गाय का ही दूध इस्तेमाल किया जाता है उसके दूध के विषय में हमें निम्नलिखित बातें याद रखना चाहिये।

(१) स्निग्ध तत्व— इसमें स्निग्ध अम्ल (fatty acids) अनुपात में तेज रहते हैं और इनके कण बड़े रहते हैं जो पचने में कठिन रहते हैं।

(२) नत्रजन तत्व— जहां माता के दूध में १·२५ प्रतिशत रहते हैं और इसमें भी ७५ प्रतिशत लैक्टालबुमिन किस्म के रहते हैं वहां गाय के दूध में ३·५ प्रतिशत जिसमें केवल ५ प्रतिशत ही लेक्टालबुमिन रहती है। ये दूसरे नत्रजन अन्य तत्वों के भी पचने में कठिनाई उपस्थित करते हैं।

(३) शर्करा तत्व— लैक्टोज किस्म की शर्करा जहां माता के दूध में ७ प्रतिशत होती है वहां यह गाय में केवल ४ प्रतिशत ही रहती है। इस प्रकार शक्ति देने वाला पदार्थ बहुत कम मात्रा में रहता है।

(४) धातुओं में — चूना माता के दूध में चौगुना पाया जाता है। बकरी को गरीबों की गाय कहा गया है। इसके और गाय के दूध में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

गधी के दूध में शर्करा तत्व तो अधिक रहते हैं पर दूसरे तत्व कम रहते हैं। इस प्रकार यह पचने में आसान रहता है और शायद इसीलिये कई जगह कमजोर बच्चों को यह दिया जाता है।

इतना दुहराना फिर भी ठीक रहेगा कि किसी भी प्राणी का दूध मां के दूध का मुकाबला नहीं कर सकता।

(३) डब्बों का दूधः— यह दो तरह का आता है। एक गाढ़े द्रव के रूप में जिसमें केवल पानी ही मिलाया जाता है इसे अंग्रेजी में (Condensed milk) या जमाया हुआ या गाढ़ा दूध भी कह सकते हैं।

दूसरा पाउडर के रूप में विभिन्न मिश्रणों के साथ इसे कंपनियां बनाती हैं। इन सब पर बनाने का तरीका लिखा रहता है। उसे ध्यान पूर्वक पढ़ना चाहिये और बतायी हुई विधि और शिशु की आयु के अनुकूल ही दूध बनाना चाहिये। पाउडर के बताये हुए परिमाण को थोड़े से पानी में लप्सी (Paste सरीखा फेंट लेना चाहिये और बाकी पानी मिलाते समय धीरे धीरे हिलाते रहना चाहिये नहीं तो जिन पाउडरों में डैक्सट्रिन माल्टोज (Dextrin-maltose) प्रकार

की शकर रहती है उसमें गुलठियां पड़ जाती हैं। हर समय ताजा दूध बनाना चाहिये। जिनके यहां ठंडा रखने के साधन (रेफ्रीज़रेटर आदि) हों वे ६—७ बोतलों में दिन भर के लिये दूध बनाकर रख सकते हैं।

४. दूध बनाने का सामान—दो मुंह वाली नाव नुमा बोतल के बदले, बड़े गले वाली तथा चपटे पेंदे वाली सीधी



दूध बनाने का सामान

बोतल ठीक रहती है। (नाव नुमा बोतल से बच्चा अक्सर हवा निगल जाता है इसलिये उसे अब छोड़ दिया गया है) इसे आसानी से साफ किया जा सकता है तथा बोतल समेत बच्चे का दूध गर्म पानी में रखकर गरम भी किया जा सकता है। कांच की या तामचीनी की कुप्पी, नापने का कांच का गिलास ढक्कन वाली हेंडलदार देचकी, बड़ा चम्मच (टेबिल स्पून जिसमें ½ औंस पानी आ जावे), बोतल धोने का ब्रुश, बोतलें, रबड़

की ४ टूटियां, ढांकने के लिये कपड़ा । यदि दूध इकट्ठा बनाना हो तो ८ बोतलें और बारह टूटियां (Nipples)

रबड़ की टूटियों को उबलते पानी से साफ कर लेना चहिये । दूध पिलाने के पहिले और बाद में बोतल को साफ कर लेना चाहिये साथ ही देख लेना चाहिये कि उसके अन्दर कुछ जमा हुआ न हो । यदि उसमें कुछ जमा हो तो ब्रुश से साफ कर लेना चाहिये

५. सबसे सरल व सस्ता दूध बनाना — ६ औंस गाय के शुद्ध दूध में ११ औंस पानी मिला कर ५ मिनट तक उबालना फिर आधे से एक चम्मच (टेबिल स्पून) मामूली शक्कर या एक से दो चम्मच लेक्टोज व डेक्सट्रिन - माल्टोज मिलाना । पहिले दूध कम परिमाण से शूरू करना चाहिये फिर जैसे २ पचता जाय वेसे वेसे दूध का परिमाण बढ़ाना चाहिये । डेढ़ साल के होने पर ही बच्चे को गाय का शुद्ध दूध दिया जा सकता है । इस प्रकार के दूध को हल्का व शीघ्र पचने वाला करने के लिये चिकित्सक की सलाह से दो ग्रेन सोड़ासाईट्रस प्रति औंस दूध के हिसाब से (2 grs Sodiicitras to an ounce of milk) दिया जा सकता है । चूने का पानी भी इस्तेमाल किया जा सकता है । दूध उबाल लेने से भी जल्दी हजम हो जाता है पर इससे जीवन तत्व 'सी' नष्ट हो जाता है जिसके लिये संतरे का रस देना चाहिये ।

एक औंस (आठ छोटे चम्मच) संतरे के रस में यह जीवनतत्व इतना रहता है जितना हमें लगभग डेढ़ सेर दूध में मिलता है । इसी हिसाब से हमें यह रस देना चाहिये । इस रस के देने से एक लाभ और भी होता है और वह यह

कि बच्चे को शीघ्र पचने वाला शर्करा तत्व भी मिलता है।

याद रखना चाहिये कि टेबल स्पून में आधा औंस पानी समाता है। जैसे जैसे बच्चा बड़ा होता जाय उसकी आवश्यकतानुसार दूध का परिमाण ज्यादा और पानी कम किया जाना चाहिये। पाचन क्रिया पर भी नजर रखना चाहिये।

६. दूध पिलाने के कुछ नियम—

अ. कितना दूध पिलाया जाय?—१½ औंस से २ औंस प्रति पौंड वजन के हिसाब से अर्थात् पूर्ण वजन का लगभग दसवां भाग दिन भर में पिलाना चाहिये। नवजात शिशु को डेढ़ औंस के हिसाब से ही शुरू करना चाहिये। वह कभी कम और कभी अधिक पीता है पर हिसाब पूरे दिन भर में पिये हुए दूध का ही लिया जाता है।

ब. कब और कैसे पिलाया जाय?— पहिले २-२ घंटे और फिर ३-३ घंटे में दूध पिलाने का रिवाज था परन्तु ४-४ घंटे का अन्तर मां और बच्चे को सुविधाजनक रहता है। आखिरी समय रात्रि को लगभग १० बजे दूध पिलाकर बच्चे को सुलाना चाहिये और फिर सबेरे ६ बजे पिलाना चाहिये। इसके बाद ६-१०-२-६ बजे देना चाहिये। पहिले पहिल रात्रि के ११ बजे और सबेरे ५ बजे दूध दिया जा सकता है। धीरे धीरे इसे ६ बजे वाले नियम पर ले आना चाहिये।

यदि बच्चा रात्रि को रोता है तो देखना चाहिये कि उसने पेशाब तो नहीं किया है। यदि किया है तो उसकी चड्डी आदि बदल दी जाय। इस समय बिस्तर को भी देख लेना चाहिये क्योंकि कभी कभी चीटियां भी चढ़ जाती हैं। मौसम

के अनुसार बच्चे को ठंड या गर्मी भी लग सकती है। यदि पसीना आया हो, मच्छड़ तंग करते हों तो हलका हलका पंखा करना चाहिये, मच्छरदानी ठीक करना चाहिये। ठंड के दिनों में यदि कपड़ा हट गया हो तो बच्चे को ठीक तरह से ढांक कर गरम रखना चाहिये।

फिर भी यदि बच्चा रोवे तो उबला हुआ पानी (शरीर की गर्मी पर) पिलाना चाहिये। जहां तक हो इस समय दूध नहीं पिलाना चाहिये। यदि चुप कराने पर भी चुप नहीं होता तो या उसे कोई कष्ट होगा या जिद्द में ही रो रहा होगा।

स. 'बच्चा भूख लगने पर रोता है' के अनुसार कई चिकित्सक बच्चे की मांग को महत्ता देते हैं। कभी कभी यह जच्चा-बच्चा का रिश्ता दोनों को लाभकारी सिद्ध होता है। सबेरे के ठीक समय का यह मतलब नहीं कि यदि बच्चा गाढ़ी नींद में सोया है तो उसे जगा दिया जाय या यदि वह ४-४५ बजे जग गया है तो उसे दूध नहीं दिया जाय। यदि सबेरे ५-३० बजे दूध दिया है तो भी ९-३० बजे के बजाय १० बजे ही दूध देना ठीक है। दिन में चार चार घंटे का अंतर रखना उचित है क्योंकि जैसे पहिले बताया जा चुका है कि माता को काम व आराम करने के लिये भी काफी समय मिल जाता है। यहां पर एक बात और याद रखने की है कि शिशु का पेट लगभग चार घंटे में ही खाली होता है और पेट के खाली होते ही पेट में एक खास तरह की ऐंठन सी होती है जिससे बच्चा रोता है। थोड़ा सा भी पेट भरने से ऐंठन कम हो जाती है और इसीलिये बच्चे आँचल में लगाते साथ ही चुप हो जाते हैं। अकसर माताएँ काम के लालच में व गप्पों के

बीच बच्चे के चुप होते ही दूध देना बंद कर देती हैं जिससे वह थोड़ी देर बाद ही पेट के खाली होने से फिर रोने लग जाता है। माता उसे फिर थोड़ा सा दूध दे देती है। इस प्रकार शिशु को अनियमित ढंग से दूध पिलाने से उसकी आदत तो बिगड़ती ही है पर साथ ही स्वास्थ्य भी बिगड़ता है। शुरू के महिनों में ही तो उसके स्वास्थ्य की नींव पड़ती है और यह अनियमितता उसके स्वास्थ्य पर भारी चोट है जिसका फल उसे जीवन भर भुगतना पड़ेगा। यहाँ पर यह फिर से बतलाने की आवश्यकता मालूम पड़ती है कि शिशु को अकेले में ही पूरे आराम से दूध पिलाया जाय। यह उसका जन्मसिद्ध अधिकार है जो उसे उसकी व उसके समाज की भलाई के लिए हर माता को उसे देना चाहिये।

ङ. *कितना गरम पिलाया जाय ?*—माता जब खुद दूध पिलाती है तब तो गर्म व ठंडे दूध की कोई दिक्कत नहीं रहती क्योंकि प्रकृति दूध को शरीर की गर्मी पर ही रखती है। मुश्किल तो तब पड़ती है जब कि हम ऊपरी दूध बच्चे को देते हैं। दूध का कुनकुना होना भी बच्चे के लिहाज से उसके लिये अधिक गर्म होता है। जो चखकर दूध की गर्मी का अंदाज किया करते हैं वे एक बड़ी भारी भूल करते हैं क्योंकि बड़ों को तो ११५ फै० पर भी दूध ठंडा मालूम पड़ेगा जो बच्चे के लिहाज से अब भी लगभग १० फै० अधिक गरम है। गरमी का अंदाज माता के दूध की गर्मी व थर्मामीटर (६८ फै०) से किया जा सकता है। दूध के अधिक गर्म होने से मसूड़ों में हल्की सी सूजन बनी रहती है तथा जिससे दाँतों के निकलते समय उन्हें पूरा रक्त नहीं मिल पाता और वे बाद में कमजोर रह जाते हैं।


बोतल से दूध पिलाना

ङ. बोतल से दूध पिलाना—दूध पिलाते समय बोतल को इस तरह पकड़ना चाहिये कि बोतल दूध की तरफ़ झुकी रहे नहीं तो शिशु के पेट में दूध के बदले हवा जायगी। बोतल की पेंदी उठी रहे। हवा जाने से बच्चा दूध कम पियेगा, उसका पेट फूलेगा और वह तंग भी करेगा।

ड. दूध पिलाने के बाद— माता खुद दूध पिलावे या बच्चा बोतल से दूध पिये वह न कुछ हवा खींच ही लेता है जिससे उसका पेट फूल जाता है। ज्यादा दूध पीने से भी ऐसा हो जाता है और बच्चे को बेचैनी लगती है जिससे वह रोता है। दूध पिलाने के बाद बच्चे को छाती से लगाकर उसकी पीठ थपथपाने से उसे डकार आ जाते हैं। जिससे उसे आराम मिल जाता है और वह फिर खेलने लगता है यदि बच्चे की नियमानुसार मालिश और सिकाई होती है तो उसे पेट की शिकायत भी कम होती है क्योंकि मालिश से उसकी मांसपेशियों में खून अच्छी तरह दौड़ता है और वे मजबूत बनती है।


पीठ थपथपाना

बच्चों की बीमारियां

बीमारी शब्द ही खराब होता है पर बच्चे में तो यह उसके जीवन मरण का प्रश्न बन बैठती है। उसकी सहन शक्ति बहुत ही कम रहती है। बच्चे अपना कष्ट नहीं कह सकते। माता और चिकित्सक अंदाज से ही उसके दुख का पता लगाते हैं। अनुभव ही हमें सहायता देता है। इन्हें हम कई हिस्सों में बांटते हैं।

(१) पैदा होते ही जो हमें देखने को मिलती है—अ. पैदा होते समय की चोटें। ये अक्सर माता के योनिमार्ग तंग होने, बच्चे के कुछ बड़े होने या उसके पैदा होते समय सिर नीचे न होने से होती हैं। अधिकतर समय पाकर ये अपने आप ठीक हो जाती हैं।

ब. स्वाभाविक कमियां या अंग भंग—शिश्नचर्म का लगभग बंद सा होना, जीभ का नीचे कुछ जुड़ा होना या अन्य किसी जगह कोई सूजन (गुल्म Tumonr) या और कोई बात होना। इसमें चिकित्सक की सलाह लेना चाहिये। ऐसा बहुत कम होता है और अधिकतर ये ठीक की जा सकती हैं। घबराने की आवश्यकता नहीं है।

स. यौनिक रोग—प्रसवाग्र देखभाल के समय बतलाया जा चुका है कि यदि मां को सुज़ाक है तो बच्चे की आंख दुखनी आ जाती है और इससे उसके अंधे हो जाने तक का डर रहता है। इसीलिये नवजात शिशु की देखभाल के समय बताई गई सावधानियों में आंख की देखभाल में १ प्रतिशत सिलवर नाइ-

ट्रेट की बूंदें डालने के लिये लिखा गया है। आजकल पैनिसिलिन की बूंदें व अन्य दवाइयां भी डाली जाती हैं। इस समय उपदंश की फुन्सियां भी दिखाई दे सकती हैं। इस विषय में पहिले से ही सावधानी बरतनी बहुत लाभदायक सिद्ध होती है।

(२) दूध पीने से संबन्धित बीमारियां—इनमें बच्चे को पोषण के लिये कम तत्व मिलते हैं अर्थात् वह भूखा रहता है और वह पनप नहीं पाता या उसे दूध अधिक मिलता है चाहे वह मां का हो या ऊपरी।

अ. पोषक तत्वों की कमी—यह तो दूध के मिगदार (परिमाण) की कमी या दूध के हलके (नत्रजन, शर्करादि तत्वों की कमी) होने से होता है। ऐसी दशा में माता का भोजन संतुलित एवं पौष्टिक होना चाहिये तथा उसे ऐसे प्रयत्न करना चाहिये कि जिससे दूध बराबर उतरता रहे। आंचलों को खाली करने के विषय में कहा ही जा चुका है। माता को दूध, शोरबा पानी आदि काफी मात्रा में पीना चाहिये। कभी कभी जरा देर में दूध उतरता है और इसके लिये धैर्य रखना चाहिये। कम से कम एक सप्ताह ठहरना चाहिये और शिशु को इस बीच एक औंस से डेढ़ औंस तक प्रति पौंड वज़न के हिसाब से दिन भर उबला और छना पानी देना चाहिये। पानी में ग्लुकोज़ मिलाया जा सकता है। २० औंस पानी में आधा औंस लैक्टोज़ या दो छोटे चम्मच मामूली शक्कर मिलाई जा सकती है। यदि १५ प्रतिशत वजन घट जाय या एक सप्ताह तक दूध न उतरे तो ऊपरी दूध शुरू करना चाहिये।

दूध कम मिलने की पहिचान-शक होने पर सबसे बढ़िया तो होगा कि हर समय बच्चे को दूध पिलाने के पहिले और बाद

सही तौलना चाहिये। इस तरह हम दिन भर का हिसाब लगाकर कर यह जान सकते हैं कि क्या उसे दिनभर में १$\frac{1}{2}$औंस प्रति पौंड के हिसाब से दूध मिलता है कि नहीं। यदि कम मिलता है और मां को दूध नहीं उतरता है तो हमें ऊपरी दूध बराबर बराबर भागों में बांटकर इतना पिलाना चाहिये कि जिससे उसे उसकी आयु के अनुसार दूध मिल सके। पर यदि बच्चे का वजन बराबर बढ़ता है तो चिन्तित होने की कोई जरूरत नहीं है; नहीं तो सूखी रोग होने का डर रहता है।

ब. ज्यादा दूध पीना—यह भी बच्चे का वजन करने से जाना जा सकता है वैसे तो पहिले कुछ महीनों तक शिशु अधिक दूध पीता भी नहीं है क्योंकि यह अक्सर ऊपरी दूध शुरू करते समय ही होता है जब कि माता बच्चे को ठूँस ठूँस कर दूध पिलाती है। दूध ज्यादा पीने वाले बच्चे अधिकतर (६०प्रतिशत) तो खुद ही अधिक दिया हुआ दूध उलटी कर देते हैं और उनका वजन बराबर बढ़ता जाता है और २० प्रतिशत अधिक दूध पीकर पचा लेते हैं तथा उनका वजन कुछ अधिक बढ़ता है और उन्हें कोई तकलीफ भी नहीं होती। इन दोनों दशाओं में फिकर नहीं करना चाहिये, पर बचे हुए २० प्रतिशत बच्चों को दस्त लगने लग जाते हैं और केवल कैस्टर आयल इमलशन (Castor oil emulsion) बहुत थोड़ी मात्रा में उन्हें राह पर ला देता है तथा उसके दूध देने के बीच के समय को भी बढ़ा देना चाहिये।

स. हिचकियां व उल्टियां—दूध पिलाने के बाद पीठ थपथपाने से अक्सर अधिक पिया हुआ दूध निकल जाता है तथा डकार आ जाते हैं। सोडा साइट्रस (Soda citras) २ ग्रेन प्रति औंस दूध के हिसाब से देने से भी फायदा होता है।

ड. पाखाने की शिकायत—(i) भूख की कब्जियत यह कम दूध से भी होती है। इसे भूख की कब्जियत (Hungry stools) भी कहते हैं। उचित दूध मिलने पर यह अपने आप ठीक हो जाती है। मगर कभी२ आंवनुमा हरे दस्त भी लगते हैं।

(ii) भोजन के तत्वों से गड़बड़ी—माता के दूध पर पलनेवाले शिशु दिन में २-३ या कभी कभी इससे एक दो अधिक चमकदार पीले रंग की नरम टट्टियां करते हैं। इसमें भीनी भीनी गंध रहा करती है पर वह दुर्गन्ध नहीं होती। पावडर के दूध पर पलनेवाले शिशु भी कुछ ऐसी ही टट्टियां करते हैं। गाय के दूध पर पलने वाले लेईनुमा गाढ़ी हलके पीले रंग की क्षारीय (alkaline) टट्टी करते हैं।

भोजन का हर तत्व मल पर अपनी छाप छोड़ता है। गाय का दूध देने में स्निग्ध तत्व अधिक और शर्करा तत्व कम पहुँचते हैं। ऐसी अवस्था में मल कड़ा सूखा व भूसले (Grey) रंग का होता है जब स्निग्ध तत्व पचता नहीं है तब मल मटमैला अधिक नरम चिकना व बदबूदार होता है।

नत्रजन पदार्थों के अधिक होने से कब्जियत होती है।

शर्करा तत्व की अधिकता पर भूरे बिलकुल नरम, कम बदबूदार व अम्लीय (acids) तरह का मल रहता है। बार बार टट्टी लगती है और शिशु के चूतड़ लाल हो जाते हैं।

इ. यकृत की बीमारी—आम तौर से जरा सा भी पेट खराब होने से व उसके फूलने से हर थोड़ा सा भी जानकार अभिभावक चिकित्सक से लिवर (यकृत) के विषय में पूछता है।

उसका ख्याल एक दम इस बीमारी (Infantile cirrhosis of the liver) की ओर दौड़ता है। इसमें पहिले पहल पेट में दर्द का रहना, उसका फूलना, यकृत का बढ़ना तथा उसका कड़ा रहना और फिर बाद में भूख का ज्यादा होना, पैशाब पीला होना, टट्टी का सफेद होना पाया जाता है। बीमारी के बढ़ जाने पर पीलिया और जलोदर हो जाता है। दूसरी दशा में तो रोग कुछ संभाला भी जा सकता है पर पीलिया वाली दशा से रोग असाध्य हो जाता है। यह एक बहुत ही घातक बीमारी है तथा किन्हीं किन्हीं घरों में पीढ़ी दर पीढ़ी मिलती है। इसका कारण उस घर की खुराक में कुछ तत्वों की कमी होना है तथा समय बे समय कुछ भी खिलाते रहना है। जैसा कहा गया है ऐसे घरों की स्त्रियों को गर्भवती होते ही मिथि-योनिन, कोलीन, आयना-सिटोल मिश्रित दवाइयां लेना चाहिये तथा बच्चे को भी जरा बड़े होने पर ये दवाइयां देना चाहिये।



समय बेसमय कुछ भी खिलाना बच्चों को बीमार करना है।

(३) चमड़े के रोग— बच्चे का चमड़ा बिलकुल मुलायम

और साफ रहता है। इसके ऊपर किसी भी तरह की फुन्सियां आदि नहीं रहती। कभी कभी फफोले या जन्म जात उपदंश (Pemphigus or heriditary Syphilis) की अनेक प्रकार की फुन्सियां दिखाई पड़ती हैं। फुन्सियां मामूली भी हो सकती हैं पर कुशल चिकित्सक से इनके विषय में राय ले लेना चाहिये।

खास कर तन्दुरुस्त बच्चों के चमड़े मुड़ने की जगह पर सफाई न रहने से चमड़ा कट सा जाता है। गला, कांख (axilla) व जांघ इसकी खास जगहें हैं। यदि बराबर तेल मला जाता है और सफाई रखी जाती है तो इससे बचा जा सकता है। यदि ये हो गये हो तो पाउडर नुकसान करता है, यह जगह को बन्द कर सड़ांध पैदा करता है। अच्छी मलहम को चमड़ा फैलाकर हल्के हल्के लगाने से (मलहम जमा न हो) और सफाई रखने से ये जल्दी ठीक होते हैं।

(४) नाड़ू—यह पांचवें दिन तक निकल आता है। यदि नहीं भी निकले तो उसे गीला नहीं रखना चाहिये। उसकी पट्टी बांधते समय उस पर तनाव नहीं आना चाहिये। कभी-कभी नाड़ू निकलने के बाद नाभि में घाव रह जाता है। उस कच्ची जगह की उचित देख-भाल आवश्यक है।

(५) चिड़चिड़ापन व रोना—यह अक्सर अनुचित देखरेख, जैसे ठीक समय पर दूध न देना, प्यासे होने पर पानी न पिलाना तथा समय असमय सुलाना व जगाना, का ही परिणाम है।

(६) बुखार व दस्त—लोग इनमें अकसर पानी नहीं पिलाते यह बड़ी भारी भूल है। दस्तों में दस्त के जरिये बुखार में गरमी के कारण बच्चे के शरीर में पानी की कमी पड़ जाती

है। इस कमी को पूरा न करने से बहुत ही भयंकर परिणाम होते देखे गये हैं। हाँ, पानी उबाला, छना व ठंडा किया हुआ हो।

(७) फिट—बुखार की गरमी बच्चे के कोमल स्नायु मंडल (Nervous System) को सहन नहीं होती और उसे फिट आने लगते हैं। वह हाथ पैर अकड़ा लेता है, आँखें फेर लेता है और कड़ा पड़ जाता है। ऐसी हालत में ठंडे पानी से हाथ पैर और मुँह पोंछना चाहिये। बुखार उतारने की दवाइयाँ देना चाहिये। घबड़ाने से तो काम बिगड़ता है। बड़े बच्चों को पेट में पटार (Round worms) होने से भी फिट आ जाते हैं। (एक आठ माह के बच्चे के भी मुँह से पटार निकली थी—लेखक)।

(८) जुकाम, सर्दी, खाँसी—ऐसी छाती की बीमारियों में गरम कपड़े पहिनाना व मालिश करके सेक करना ठीक है पर उनके बदन को कसना ठीक नहीं है। इसी आधार पर एन्टि-फ्लेमिन आदि की मोटी लेप छोटे शिशुओं को ठीक नहीं होती क्योंकि इस मोटी लेप के वज़न से भी नन्हें मुन्ने को ठीक तरह साँस लेने में तकलीफ होती है। ऐसी हालत में तारपीन और कड़ुए तेल को बराबर मिलाकर हलकी मालिश करना चाहिये तथा उसे गरम रखना चाहिये। बच्चे को तो वैसे ही सर्दी से बचाया जाना चाहिये। सर्दी से बचाने के लिए पैरों में मोजे और सिर पर कनटोपा आवश्यक है।

(९) मुंह में छाले-जब तक मुँह की झिल्ली, श्लेष्मक कला (mucous membrane) नहीं छिलती तब तक मामूली दशा में बच्चे को मुंह में छाले नहीं पड़ते। अक्सर बहुत सफाई रखने

के फेर में जीभ जोर से (बच्चे के लिहाज से) साफ कर दी जाती है, जिससे झिल्ली छिल (इतनी बारीक कि दिखती नहीं है) जाती है और फिर छाले पड़ते कोई देर नहीं होती। दूध पिलाते समय



खिलौना दीजिये



घृणित रिवाज

आंचलों विशेषकर चूचुक के आसपास के हिस्सों को धो लेना चाहिये। जब छाले हों तब तो इन्हें धोना बहुत जरूरी होता है। बोरो ग्लिसरीन दवाई के लगाने से सफाई रखने से छाले ठीक हो जाते हैं। कभी कभी उपदंश के छाले निकलते हैं। किसी भी मनुष्य का बच्चे को चूमना एक घृणित रिवाज है न मालूम उसके मुंह में घटसर्प व उपदंश के ही कीटाणु हों। यदि आपको प्यार ही आ रहा हो तो उसे खेलने के लिये खिलौने दीजिये।

(१०) आंख दुखना—यह अक्सर सफाई की कमी से दुखती है। सर्दी जुकाम के समय भी गंदे हाथ आंख में लग जाने

से आंख में इस तरह का कष्ट हो जाता है। आंख के दुखने का कोई भी कारण हो पर इतना ध्यान रखना चाहिये कि शिशु की आंख चिपकी न रहे क्योंकि आंख चिपकने से आंख में छाई व फुली पड़ जाती है जिससे जन्म भर के लिये आंख खराब हो जाती हैं। बोरिक एसिड १० ग्रेन १ औंस पानी में डालकर पानी उबालना चाहिए और फिर सहते हुए पानी से आंख व पलकों में लगा हुआ कीचड़ साफ करना चाहिये, दिन में दो तीन मरतबा सेकना चाहिये। आंख खोलकर देख लेना चाहिये कि पुतली पर कोई दाग तो नहीं पड़ा है। आंख चिपकने न देने के लिये आंख में मलहम लगाना चाहिये।

११. कान–बच्चे कई समय लगातार रोते हैं और कारण न अभिभावक और न चिकित्सक ही समझ पाते हैं। ऐसे समय में कान देखना चाहिये। कान की सफाई न होने से अक्सर कान के पर्दे पर दबाव पड़ता है खाने का सोडा ५ ग्रेन आधी औंस ग्लिसरीन में डालकर कान की दवा बनाई जा सकती है। इससे मैल फूल जाती है और निकल आती है। नहीं तो हलकी सूजन में कारबोलिक एसिड ५ बूंद, टिंचर ओपियम १० बूंद, ग्लिसरीन आधा औंस से बनी हुई कान की दवा बहुत फायदा पहुँचाती है। यदि इतनी देखभाल की जाय तो कान का बहना (olitis-extrua) होता ही नहीं है। देखभाल न होने से अन्दर घाव पड़ जाते हैं और पीप बहना शुरू हो जाती है। इसके लिये केवल दवा डालने से (जैसा कि अक्सर होता है) कुछ लाभ नहीं होता किसी कुशल चिकित्सक को कान दिखाना चाहिये क्योंकि शायद पीप कान के अन्दर से आ रही है। जब कान में से पीप निकलती हो तब उसे पिचकारी से धुलवाना नहीं चाहिये क्योंकि पीप और अन्दर जाकर नुकसान पहुँचा सकती है।

१२. सूखी रोग (Rickets)—सूखी के नाम से व्यक्ति परिचित है। कोई इसे छुतहा मानता है तो कोई देवी देवता का कोप। सच बात तो यह है कि यह मां की लापरवाही ही बताता है जिसने न तो खुद ही अपने स्वास्थ्य की देखभाल की और न बच्चे की। हो सकता है कि यह आर्थिक कारणों से हो पर जितना आर्थिक कारणों को दोष दिया जाता है वह सचमुच में उतना नहीं होता है।

जीवन तत्व 'डी' हमारे यहाँ सूर्य की किरणें ही इतना बनाती हैं कि इसकी आवश्यकता हमें नहीं रहती। होता यह है कि चूना और फास्फरस तत्वों का उपयोग बराबर नहीं होता। चूने का पानी और फास्फरस तत्वों (जीवन तत्व 'डी' इनमें अकसर मिला रहता है) की बहुत ही स्वादिष्ट दवाइयाँ मिलती हैं जो इसमें लाभदायक सिद्ध होती हैं।

इनमें शिशु को आराम की आवश्यकता है। जब तक हड्डियों में ताकत न आ जाय तब तक उसे पैदल चलाना नहीं चाहिये नहीं तो हड्डियाँ झुक जातीं हैं। कई मालिश बतलाते हैं, यह ठीक है, पर हलके हाथों से मलना चाहिये जिससे तेल भिद जाय (gets absorbed) क्योंकि अधिक जोर लगाने से हड्डी के टूटने का डर रहता है।

(१३) संक्रामक (छुतहे) रोग (Infectious diseases)–

पुराने जमाने से मानव इन्हें असाध्य मानता आया है। जिसका कारण वह समझने में असमर्थ रहता है उसे वह ईश्वरीय कोप के पल्ले मढ़ देता है। कभी पाश्चात्य देशों में भी उपदंश तक को ऐसा ही समझा जाता था। इसी तरह यदि

चेचक, प्लेग, हैजा आदि के बारे में हमारे यहाँ भी अनेक अन्धविश्वास चले आ रहे हैं तो इसमें आश्चर्य की या हँसी उड़ाने की बात नहीं है क्योंकि अब भी इस युग में हमारे देश में निरक्षरता और अज्ञानता का बोलबाला है।

जैसे-जैसे विज्ञान इन रोगों के कारणों का पता लगाने में सफल हुआ है वैसे-वैसे उसने इनसे बचने के साधन भी ढूंढ़ निकाले हैं पर अन्धविश्वास से हमारे अनेक भाई इन पर ध्यान नहीं देते।

जहाँ ये रोग हों वहाँ बच्चों को नहीं ले जाना चाहिये यदि घर में ही हों तो रोगी से बच्चों को दूर रखा जाय। इन रोगों के फैलने के पहिले ही चिकित्सक की सलाह से बचाव की सुई लगवा लेना चाहिये।

आजकल चेचक, काली (कुकर) खाँसी, घटसर्प, प्लेग, हैजा, क्षय (तपेदिक) आदि से बचाव की सुइयाँ अपने-अपने समय पर अवश्य लगवा देना चाहिये। चेचक की सुई १ माह की उम्र तक भी लगवाई जा सकती है। इसमें फूलन हो जाती है तथा खुजलाहट होती है। ८-१० दिन के बाद ये पकने लगते हैं। इन्हें चोट से बचाना चाहिये तथा नरम रखने के लिये कोई भी तेल (चमेली, जैतून, नारियल) गरम करके ठन्डा किया हुआ लगाया जा सकता है। इन्हें खुजलाना नहीं चाहिये। खुजलाने से ये घाव बन जाते हैं। इस टीके से घबड़ाने की कोई आवश्यकता नहीं है। इससे तो एक प्रकार से शिशु को चेचक से बीमार किया जाता है जिससे चेचक के दाने सब शरीर में न निकल केवल इन्हीं टीके वाली चार जगहों से निकलते हैं और शिशु कुरूप, अन्धा आदि होने से बच जाता है। आजकल तो तीन-तीन रोगों की इकट्ठी प्रतिरोधक सुइयाँ (Preventive inoculations) निकली हुई हैं।

अकालीन शिशु

जिस शिशु का जन्म समय के पूर्व (सातवें से नवें माह तक) ही हो जाय उसे अकालीन शिशु कहते हैं। इन शिशुओं का वज़न कम रहता है तथा पाचन व सहनशक्ति बहुत ही कमजोर होती है। इन्हें जीवित रखना एक मामूली गृहस्थ के लिये बहुत ही कठिन रहता है क्योंकि इनकी देखरेख में बहुत सावधानी चाहिये। जरा सी गलती इनकी मौत का कारण बन सकती है।

वैसे पांच पौंड से कम बच्चे की देखरेख में इतनी ही सावधानी बरतना चाहिये अर्थात उसे भी अकालीन वर्ग में समझना चाहिये। पिछड़े हुए देशों में चाहे कुछ भी हो पर उन्नत देशों ने इसमें बहुत तरक्की कर ली है। इतने छोटे बच्चे को गर्मी और आराम दो चीजें ही मुख्य चाहिये और इसके लिये उनने अस्पतालों में गरमी एक सी रखने के लिये विशेष प्रकार के इंकुबेटर्स (Incubators) भी रखे हैं। वहां भी घरों में इनका मिलना मुश्किल ही है।

यदि ऐसे शिशु की संभावना हो तो एक चौखुटी टोकनी का प्रबन्ध होना चाहिये जिसके अंदर-बाहर मोटा कागज लगाया जावे। सिरहाने की तरफ फलालेन भी लगा देना चाहिये। अंदर चारों ओर पतली नरम व गरम गदेलियों का इंतजाम हो। भारत में गरमी के दिनों में तो नहीं पर ठंड के दिनों में तीन गरम पानी की थैलियां भी तैयार रखना चाहिये।

जैसे ही शिशु पैदा हो उसकी आंख आदि की देखभाल

कर तथा नाड़ काटकर उसे कंबल में लपेट कर टोकनी में लिटा देना चाहिये। उसे चित्त (पीठ के बल) कभी नहीं लिटाना चाहिये। गदेलियों के नीचे आजू बाजू १६० फै० तथा पैर के पास १८० फै० पर गरम पानी की थैलियां रखना चाहिये। बच्चे की करवट हमेशा दूध पिलाने के पहिले बदलना चाहिये। इस दशा में उसे ६ से १२ घन्टे तक पहिले पहिल लिटा रखना चाहिये।

उसके स्नान व सफाई व कपड़े पहिनाने में कम से कम समय लेना चाहिये। ३½ पौंड से कम बच्चे को हर तीसरे व इससे अधिक को हर दूसरे दिन नहलाना चाहिये।

३ पौंड के बच्चे को स्तनों से दूध नहीं पिलाना चाहिये। इन्हें आंचल का दूध (पूर्ण सफाई के साथ) निकाल उसमें (३ औंस मां के दूध में ५ औंस पानी) पानी मिलाकर पिलाना चाहिये। धीरे धीरे पानी की मिगदार घटाना चाहिये। हलका मिश्रण (अर्थात ज्यादा पानी मिला हुआ) देना कभी भी गलत नहीं है। यदि माता के दूध नहीं उतरता तो ऊपरी दूध इसी आधार पर इतना ही हलका मिश्रण रख कर दिया जा सकता है। आंचल के दूध से एक सप्ताह के बाद और ऊपरी दूध से २-३ सप्ताह के बाद ही शिशु का वजन बढ़ना शुरू होता है।

वैसे तो शिशु क्या किसी का भी खुद इलाज नहीं करना चाहिये पर इन शिशुओं को तो कुशल चिकित्सक से बिना पूछे कोई भी दवा देना खतरे से खाली नहीं है।

———

मानसिक विकास की रूप रेखा

मनोविकास का आधार— मनुष्य का विकास उसके गर्भ बीज में मौजूद स्वभाव-तत्वों (Chromosomes) पर निर्भर रहता है। गुणांकुरों (genes) के समूह को स्वभाव-तत्व कहते हैं। ये आधे माता और आधे पिता के गर्भ बीज से मिलते हैं। बाल्यावस्था में शिक्षा-दीक्षा, वातावरण व औषधियों से इन्हें बहुत कुछ प्रभावित किया जा सकता है। इन उपायों के द्वारा हम गुणांकुरों के जोड़े में से अच्छे को (चाहे वह दुर्बल ही हो) अधिक से अधिक बढ़ावा देते हैं और निकृष्ट को (चाहे वह प्रबल हो) दबाने की चेष्टा करते हैं। इस तरह स्वभाव-तत्व (गुणांकुरों का समूह) और वातावरण एक दूसरे पर प्रभाव डाला करते हैं।

पहिले पहल बालक की अनुभव एवं ग्रहणशक्ति (Experiencing & grasping power) काम करती है। वह अभी सीधा साधा प्रतिक्रियात्मक व नकलची प्राणी ही रहता है। इस तरह उसकी प्रवृत्तियों व वातावरण में संघर्ष सा चालू होता है जो उसकी कार्य करने की शैली बनाता है। इस प्रकार माता-पिता का ही मार्ग दर्शन बालक का भविष्य बनाता व बिगाड़ता है। *

गर्भ में माता के सद्‌गुणांकुरों का प्रभाव भी गर्भ के गुणांकुरों पर पड़ता ही है और इसीलिये भारतीय संस्कृति में गर्भाधान के पश्चात् विलासिता व अन्य मानसिक प्रवृत्तियों पर

---

* इस विषय पर हमारे यहां से प्रकाशित 'बाल विकास प्रथम सात वर्ष' पुस्तक पढ़िये। —प्रकाशक

रोक लगाई गई है। इस प्रकार माता पिता के विचार, गुणांकुर, घर का वातावरण आदि सब बालक के विकास की पृष्ठभूमि बनाते हैं।

पैदा होने के पहिले—गर्भ में शिशु पूरी तरह से माता के ऊपर निर्भर रहता है उसे न भोजन के लिये रोना पड़ता है और न ठंड से बचने के लिये कोई कपड़ा ओढ़ना पड़ता है। चाहे गर्मी हो चाहे सर्दी, उसे इससे कोई मतलब नहीं। वह तो मजे में गर्भाशय के अन्दर इधर उधर उछला करता है।

पहिले छह माह—पैदा होते ही उसे आंचल से दूध खींचना पड़ता है। उसके नाजुक स्नायु मंडल (Nervous System) पर सर्दी गर्मी का शीघ्र ही प्रभाव पड़ता है जिससे बचाने के लिये मां को सतर्क रहना पड़ता है। यदि दूध ४-४ घंटे में पिलाया जाय तो भूख के कारण वह न रोयेगा। इसी तरह गीला बिस्तरा होने पर, जैसा कि अक्सर पेशाब करने के बाद होता है, वह रोकर मां का ध्यान आकृष्ट करता है। उसे सूखी, नरम व गरम जगह पर लिटा देने से वह चुप हो जाता है। अभी तक वह बाहिरी दुनियां की चहल-पहल, राग-रंग से बिलकुल अनभिज्ञ था पर अब उसे रोशनी और आवाज का नया अनुभव होता है। तेज रोशनी और आवाज दोनों उसे असह्य होते हैं। रेडियो की मामूली आवाज से वह न जागता ही है और न चौंकता ही है। हां बर्तन के गिरने से, बिजली के कड़कड़ाने से उसका एकाएक सहम व चौंक जाना या रो उठना स्वाभाविक ही है। ऐसे समय उसके ऊपर हाथ रख लेना चाहिये।

अभी वह बिलकुल असहाय है। नाक पर बैठी हुई मक्खी को भी भगा नहीं सकता, आसपास के वातावरण से वह परिचित

नहीं है पर घर के कुत्ते व बिल्ली के नजदीक आ जाने से वह रो पड़ता है। इसीलिये यदि मच्छर व मक्खियां हों तो उसे छोटी मच्छरदानी व पतले कपड़े से ढांक कर सुलाना चाहिये। माता को उसे अकेले नहीं छोड़ना चाहिये जिससे कि शिशु जागते ही उसे देख सके। यदि वह दूर हो तो माता को चाहिये कि वह बीच बीच में आवाज देती रहे जिससे शिशु अपने को अकेला अनुभव न करे। (पृष्ठ ८४)

मां का शिशु के साथ सबसे नजदीकी रिश्ता है। मां का व्यवहार ममता पूर्ण व सहानुभूति वाला होना चाहिये। उसे याद रखना चाहिये कि शिशु कुछ कष्ट होने पर ही चिल्लाता है। जब कभी वह समझ नहीं पाती या उसे कुछ जरूरी काम रहता है और बच्चा तंग करता है तो वह उसे झकझोर देती है, चिढ़ती है और न जाने कितना ऊल जलूल बकती है। यह शिशु के ऊपर अच्छा प्रभाव नहीं डालता। इससे वह चिड़चिड़ा व अस्थिर स्वभाव वाला बनता है।

चिड़चिड़ापन दूर करने का और शिशु को बहलाने का एक साधन है और वह है खिलौना। मां बाप के बाद शिशु का परिचित वही रहता है। उसका रंग और आकार लुभावना हो उसे गहरे तथा पक्के रंग का होना चाहिये। यदि खिलौना छुनछुना नुमा अर्थात आवाज वाला हो तो और अच्छा। यदि सावधानी बरती जाय तो प्रथम छह माह आराम से ही बीतते हैं बाद में बड़े होने पर खिलौनों को मजबूत होना चाहिये। यदि आर्थिक स्थिति अच्छी है तो इनका यंत्रचालित होना और अच्छा है।

छह माह से एक वर्ष—अब दांत निकलने वाले होते हैं

और इस समय बच्चों को कई प्रकार के कष्ट होते हैं । अक्सर यहीं से स्वास्थ्य बिगड़ना आरम्भ होता है । इसी आयु में पहिले पहल अन्न दिया जाता है और उसे उपासनी व अन्नप्राशनसंस्कार कहते हैं । हमें भोजन की पौष्टिकता, स्वाद और पाचकता पर ध्यान देना होगा क्योंकि बच्चा दांतों के निकलने की वजह से बीमार सा रहता है और दूसरे कुछ कुछ समझने भी लगता है तथा तीसरे उसकी खेल में कुछ प्रवृत्ति होने से मां बाप अक्सर लापरवाह से हो जाते हैं । खास प्रकार के भोजन की विशेष रुचि हो जाने से बालक एक ही खास चीज खाते हैं जो पोषण के सब तत्वों को उन्हें मिलने नहीं देती और उन्हें जिद्दी बना देती है । धीरे धीरे सभी प्रकार के पदार्थ भोजन में मिलाना चाहिये । अक्सर जिन माताओं को दूध काफी उतरता है वे अपने बच्चों को अनियमित तरीके से दूध पिलाती हैं, ऊपर से कुछ भी नहीं देतीं जिससे बच्चा दूध छुड़ाते समय बहुत तंग करता है और कमजोर भी हो जाता है ।

छह माह का बच्चा बड़ों का खिलौना ही रहता है । उसकी मुस्कान सभी को प्रसन्न करती है तभी तो अनजान व्यक्ति भी उसे देख पुचकार उठता है । कभी कभी यह प्यार उसे बहुत मंहगा पड़ता है । लोग लाड़ प्यार से उसे झझकोरते हैं, उछालते हैं, दाढ़ी के बाल गड़ाते हैं । यह ठीक नहीं है इन सब से बच्चा सहम जाता है और ऐसे आदमियों को देखते ही रोने लगता है । बच्चों के चुम्बन के विषय में पहिले कहा जा चुका है ।

अंगूठा चूसने की आदत इसी समय से शुरू होती है। हमें जबरदस्ती मुँह से अंगूठा नहीं हटाना चाहिये । यह तो उसे डांटना ही हुआ जो हम आप भी बरदाश्त नहीं करते । ऐसे समय

उसके हाथ में खिलौना देना चाहिए या गाकर, बाजा बजाकर या और किसी तरह उसका ध्यान वहां से हटाना चाहिये। इन उपायों से वह अपने आप अंगूठा चूसना बन्द कर देगा।

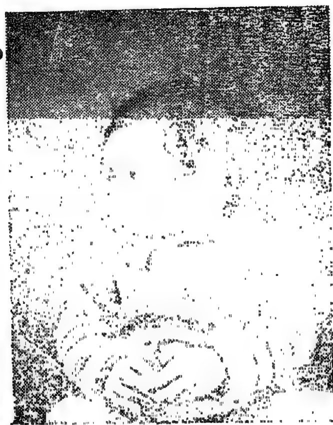
माताएं बालकों को गाकर तुकबंदियाँ बनाकर सुलाती हैं व बहलाती हैं। इन गानों व तुकबंदियों को लोरियाँ कहते हैं। ये मधुर व सुन्दर अर्थ वाली होना चाहिये क्योंकि बालक पर इनका असर धीरे धीरे कुछ न कुछ पड़ता ही है। डर पैदा करने वाली लोरियां व बातें (हौआ आया, कुत्ता काट जा आदि) ठीक नहीं होतीं। यह मां बाप के हाथ में है कि वे उसके मस्तिष्क में जैसे चाहे वैसे विचार भरें।

एक वर्ष के बाद— पहिले वर्ष में शिशु अपने शरीर पर काबू पाता है और एक आध शब्द बोलता है। दूसरे वर्ष के अन्त तक नित्य क्रियाओं पर अधिकार कर लेता है। उसे इनकी जगह बतला देने से वह वहीं पर इनके लिये जाता है। नींद में कभी कभी बिस्तरा खराब हो जाता है पर यदि उनकी आंख खुल जाती है और आपने उसमें इतना भरोसा पैदा कर दिया है कि वह आपको जगा सके तो वह आपको अपनी सहायता के लिये आवाज देगा ऐसे समय चिढ़ना नहीं चाहिये। उन्हें सोने के पहिले पेशाब करने की आदत डालिये और सोने से लगभग आध घन्टे पहिले तक पानी, दूध, चाय इत्यादि कुछ न दीजिये। यदि बिस्तरा खराब हो भी जाय तो डांटिये नहीं बल्कि समझाइये।

यदि आद खुद मुंह साफ करते हैं तो बच्चा आपकी नकल करेगा आपको इसके लिये कुछ न कहना पड़ेगा। वह

विभोर





प्रसन्न

खुद ब खुद अपने दांत साफ करेगा। यही हाल शिष्टाचार का है। 'नमस्ते' 'जयहिन्द' आदि कहने के लिये जबरदस्ती नहीं करना चाहिये। यदि आप सब सबेरे उठते ही प्रार्थना करते हैं तो वह भी प्रार्थना के कुछ शब्द कहेगा।

सिखाने का एक और उपाय है और वह है उसका हमजोली बन जाना। खेल के द्वारा आप उसके बहुत नजदीक पहुँच जावेंगे और उसके दिल में से मां बाप के प्रति जो भय का भाव (जो अनुचित है) रहता है वह निकल जावेगा। इस तरह उसकी किसी किस्म की हिचक आपके प्रति नहीं रहेगी और वह आप से ही नहीं बल्कि सबसे खुलकर बातें कर सकेगा।

छोटे बच्चों का तुतलाना सब को प्रिय लगता है। कई इसको दुहराते हैं और कई उसकी हंसी उड़ाते हैं इससे वह ठीक उच्चारण सीखने के बदले इनसे घृणा करता है। अपनी हंसी कौन उड़वाना चाहता है? इस तरह हो सकता है कि तुतलाना हकलाने में भी परिवर्तित हो जाय। इसीलिए उनके सामने सही उच्चारण करना चाहिये और जैसे जैसे वह समझने लगे उसे समझाना चाहिये। जो बच्चा हकलाता हो उसके सामने इस तरह का व्यवहार करना चाहिये कि वह आपको कोई भिन्न व्यक्ति न समझे क्योंकि हकलाना एक गुप्त भय से बढ़ता है। ऐसे बच्चे को अकेले में जोर जोर से पढ़ने को कहना चाहिये जिससे जिन विशेष शब्दों पर वह हकलाता है उन्हें उसे कहने का अभ्यास हो जाय।

दो वर्ष के बाद—बालक को दूसरे वर्ष के बीतते हम-जोलियों से प्रेम सा हो जाता है। वह उनमें और खिलौनों में

मगन रहता है। उसे साथियों की चाह होती है। यदि संयुक्त परिवार हुआ या आसपास अच्छे पड़ोसी हुए तो उसे कोई कठिनाई नहीं होती। जहां ऐसा न हो वहां मां बाप को उसके मनोरंजन आदि का ध्यान रखना चाहिये।

अब वह चलने लगा है। उसके पैर बाहर की ओर निकल पड़े हैं पर उसमें समझ नहीं है। दरवाजों की चौखट पर ऐसी आड़ लगा देना चाहिये कि जिसे वह लांघ न सके और न ही उसे अलग कर चुपचाप बाहर खिसक सके। साथ ही घरों में पानी से भरे हुए टब, हौजों आदि को भी उनकी पहुँच के बाहर रखना चाहिये। इन बातों की लापरवाही से कई बच्चे सड़क में दुर्घटनाओं के शिकार होते हैं और कई घरों में ही हौज व टबों में डूबे हुए पाये जाते हैं।



सड़क पर चलना सिखलाइये

उसे अब आप मित्रों के घर भी ले जावेंगे। कई समय

ऐसा होता है कि उसे आपने तैयार कर लिया है और आप तैयार हो रहे हैं और इसी बीच में वह खेल ही खेल में अपने कपड़े गंदे कर लेता है, इस पर आप झल्ला उठते हैं। खेलना तो उसका अधिकार है इसलिये उसे अपने बाद ही तैयार करना चाहिये। बाहर जाने के पहिले उसे (यदि आवश्यकता हो तो) कुछ खिला पिला व पेशाबादि करा दीजिये। साथ ही अब उसे सड़क पर चलना सिखाइये। पहिले उंगली पकड़कर फिर धीरे धीरे साथ साथ और फिर, सावधानी बरतते हुए अकेले मोड़ों पर व सड़क लांघते समय अधिक सचेत रहने के लिये बार बार कहना चाहिये।

अक्सर दूसरे तीसरे वर्ष में बालक के दूसरा भाई व



बड़े बच्चे को अलग समय दीजिये

बहिन हो जाता है। यह ठीक है या नहीं इस पर यहां विवाद

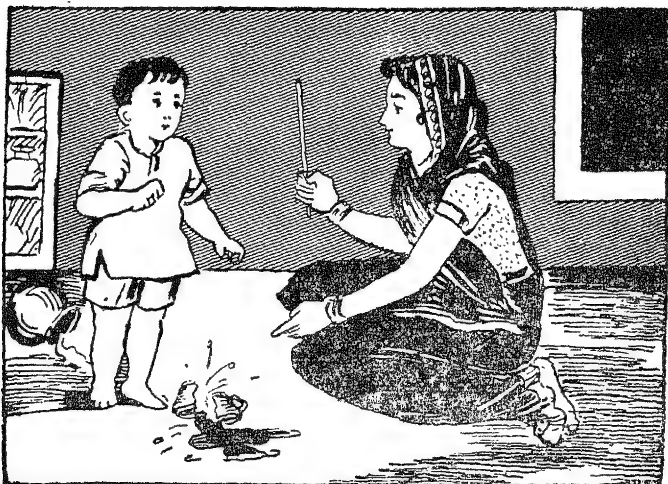
उचित नहीं है। स्वभावत: छोटे बच्चे पर मां बाप का चाव-दुलार अधिक होता है। दो तीन साल का बालक भी तो छोटा है, वह तो अब भावुक भी हो चला है। वह इसे अत्याचार सोचता है और इसका कारण छोटे भाई व बहिन को ही सोचता है। वह उसे अपनी बालबुद्धि के कारण प्रतिद्वन्दी या दुश्मन समझने लगता है और हो सकता है कि वह उसे पीटने भी लग जाय। दूसरा बच्चा पैदा होने के पहिले उसमें स्नेह पैदा करना आवश्यक है। उसे बतलाना चाहिये कि तुम्हें एक तुम्हारे जैसा छोटा सा साथी लावेंगे, उसे खिलाना आदि। इतना सब करने के बाद भी माता को चाहिये कि उसके लिये कुछ समय अलग से निकाल कर रखे जिसमें उसके हृदय में अलगाव की भावना का जन्म ही न हो।

बालबुद्धि की सरलता सबको मालूम है। वह अपने-पराये में भेद नहीं मानता। उसे किसी चीज का स्वामित्व का महत्व नहीं मालूम। पड़ोसी की गेंद वह खेलने के लिये अपने खिलौनों में रख लेता है। वह चोरी नहीं करता है क्योंकि (यदि उसे याद है तो) मांगने पर उसी समय उसे वह दे देता है। यह चोरी नहीं है। चोर कहना उसे चोर बनाना है।

शाला जाने की तैयारी

इस तरह अब तक बालक मां बाप से, साथियों से घुलमिल जाता है। उसे अब शाला में मिलना होगा। उसे बाहर की उल्टी सीधी बातें सुनने को मिलेंगी। वह मां बाप से भी ऐसे ही प्रश्न पूछेगा और उनमें इतनी क्षमता चाहिये कि वे उसके प्रश्नों का उत्तर दे सकें, उसकी हर जिज्ञासा को शांत कर सकें। उन्हीं का मार्ग दर्शन उसे बनावेगा व बिगाड़ेगा।

आत्म विश्वास—जैसे जैसे बालक बढ़ता है वह नये काम सीखने का प्रयत्न करता है। हमें उसकी सहायता करनी चाहिये। यह सहायता हमें इस तरह से देना है कि जिससे उसे इसका आभास न हो नहीं तो वह हर समय सहायता मांगेगा अथवा



दण्ड देने के बदले धीरज से काम लीजिए

डरपोंक हो जावेगा। सीढियां चढ़ता है तो चढ़ने दो, रोको मत बस होशियार रहो कि कहीं गिर न जाय। चम्मच से कप का इस्तेमाल करता है तो करने दो, उसके पकड़ने के तरीके को सुधार दो। इससे वह एक दो बार दुहराने से सीख जावेगा। नुकसान होने पर दंड मत दो क्योंकि ऐसा करने से वह सहम कर अपने आप नया काम करने से डरेगा।

अहं का उत्कर्ष—धीरे धीरे पाठशाला जाने का समय आता है। उसमें जब अहं जागृत होता है। इस अहं को ठीक रास्ते पर लगाना चाहिये क्योंकि यदि इस अहं का उत्कर्ष (Sublimation) होता है तो मानव देव बनता है और नहीं तो इसी अहं का पतन उसे दानव बना देता है। इसके उत्कर्ष में माता पिता शिक्षक समाज व राष्ट्र को सहयोग देना है। इसी उत्कर्ष में तो संसार का, मानव जाति का हित छिपा हुआ है। इसी अहं के उत्कर्ष में शिशु आपकी शुरू से सहायता मांगता है। यह उसका अधिकार है। उसे उसका अधिकार हम सबको देना है।

———

यदि भोजन शरीर का पोषण करता है तो उचित मार्ग दर्शन बुद्धि का विकास करता है। माता-पिता, सगे संबंधियों व पड़ोसियों का आचरण ही बालक के मनोविकास की आधार शिला रहती है। यदि हम अपनी संतान को सफल और सक्रिय नागरिक बनाना चाहते हैं तो हमें असामाजिक कृत्यों (घूसखोरी, काला बाजारी, बेईमानी आदि) से रिश्ता तोड़ना होगा। अज्ञानता और गुंडागिरी अंत करने का यह एक निश्चित् मार्ग है।

माता-पिता से

भारतीय संस्कृति—'मातृमान पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद ॥' यह शथपथ ब्राह्मण का वचन है। वस्तुतः जब तीन उत्तम शिक्षक अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान् होता है।

'प्रशस्ता धार्मिकी माता विद्यते यस्य स मातृमान्।' धन्य वह माता है जो गर्भाधान से लेकर जब तक पूरी विद्या न हो तब तक सुशीलता का उपदेश करे।

गर्भाधान के पश्चात् स्त्री को बहुत ही सावधानी से भोजन छादन करना चाहिये। बुद्धि, बल, रूप, आरोग्य, पराक्रम, शांति आदि गुणकारक द्रव्यों ही का सेवन जब तक सन्तान न हो स्त्री करती रहे।

बालकों को माता सदा उत्तम शिक्षा दिया करे जिससे सन्तान सभ्य हो और किसी अंग से कुचेष्टा न करने पावे।

सत्य भाषण और सत्य प्रतिज्ञायुक्त सबको होना चाहिये।

माता शत्रुः पिता बैरी येन बालो न पाठितः।
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये वको यथाः।

अर्थात् वे माता और पिता अपने संतानों के पूर्ण वैरी है जिन्होंने उनको विद्या की प्राप्ति न कराई, वे विद्वानों की सभा में वैसे तिरस्कृत और कुशोभित होते हैं जैसे हंसों के बीच में बगुला।

(सत्यार्थ प्रकाश)

विश्व-कवि खलील जिब्रान के विचार—

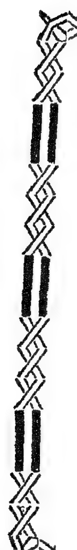
तब एक बच्चे को चिपटाये हुये एक तरुणी ने कहा—गुरुवर, सन्तान के बारे में हमें कुछ उपदेश दीजिये।

उन्होंने उत्तर दिया—

तुम्हारी सन्तान तुम्हारी सन्तान नहीं है। उन्होंने तुमसे जन्म जरूर लिया है किन्तु तुम निमित्त मात्र हो। कुछ काल तुम्हारे साथ रहने से तुम्हारे बच्चे तुम्हारी 'सम्पत्ति' नहीं बन जाते।

तुम उन्हें अपना प्यार दे सकती हो, अपने विचार व भावनाएं नहीं।

क्योंकि वे अपने विचार व भावनाएं अपने साथ लाये हैं। उनके शरीर को घर देना मात्र ही तुम्हारे हाथ है, उनकी आत्मा को तुम बन्दी नहीं बना सकतीं। उनकी आत्मा का निवास दूर भविष्य के मन्दिर में है, जहां तुम्हारी दृष्टि स्वप्न में भी नहीं पहुँच सकती।



अपनी संतान को अपने ही साँचे में ढालने का प्रयत्न छोड़ दो। उनके समान होने की कोशिश भले ही करो। क्योंकि जीवन पीछे नहीं मुड़ता, न ही भूतकाल के सीकचों में कैद रहता है।

जीवन आगे बढ़ता है। सन्तान तुमसे आगे बढ़ेगी।

(अमर ज्योति फरवरी १९५५,)



सुखी मातृत्व



गंभीर

श्री पाल. एम. पिटमैन के दस उपदेश

१. आप पूरे तन मन से अपने बच्चे को प्यार करें पर चाव दुलार बुद्धिमानी से हो।

२. अपने बच्चे को आप अपनी निजी सम्पत्ति न समझें वरन् एक व्यक्ति।

३. अपने बालक से प्रेम व आदर को आप अपना अधिकार न समझें वरन् आप उसके योग्य पात्र बनिये।

४. जब भी आप अपने बालक की अपरिपक्वता व भयंकर भूल से क्रोधित हों (धैर्य खो बैठें) तभी आप अपनी उसी आयु के किसी अनुचित साहसिक कार्य (लड़कौंधी) एवं भूल का स्मरण करें।

५. याद रखिये कि आपके आचार को ही आदर्श समझ बैठना आपके बालक का विशेषाधिकार है इसलिये इस ओर सचेत रहिये।

६. यह भी याद रखिये कि दोष निकालने व आचार की शिक्षा देने से बढ़कर आपका अनुकरणीय व्यवहारिक जीवन ही उत्तम उदाहरण है।

७. आप बालक के पथ प्रदर्शक बन उसे उत्कर्ष के नित नवीन मार्ग अपनाने में बुद्धिपूर्वक सहायता दें न कि पुराने ढर्रे को

पकड़े रहें व घिसी घिसाई लकीर को पीटते बैठें। अन्धविश्वास-रूपी ऊबड़ खाबड़ मार्ग को आप त्याग दें।

८. आप अपने बालक को स्वावलम्बी बनना व जीवन संघर्ष से टक्कर लेना सिखलायें।

९. आप बालक को सौंदर्य के पहिचानने और उसके आदर करने में, दयालु बनने में, सत्य से प्रेम करने में (अपनाने में) और मित्रता निबाहने में सहायता दें।

१०. आप अपना घरेलू जीवन वास्तविक (सच्चा) बनावें कि जिससे वह स्वतः आपके लिये, आपके बच्चों के लिये, आपके मित्रों के लिये व आपके बच्चों के मित्रों के लिये स्वर्गीय सुख उपलब्ध करा सके। (साहित्य प्रचारक—मार्च १९५५)

संतान राष्ट्र की आत्मा है। माता-पिता के पास वह अमानत के रूप में रहती है। अमानत में ख्यानत करना एक गंभीर अपराध है। यदि माता-पिता संतान को शिक्षित नहीं करते, उसकी सद्प्रवृत्तियों का विकास नहीं करते तो वे निस्सन्देह अमानत में खयानत करते हैं और वे राष्ट्र द्रोह के अपराधी हैं। हर माता-पिता का पवित्र कर्तव्य है कि वे अपनी सन्तान की ही नहीं वरन् हर बालक व बालिका की कोमल भावनाओं का आदर करते हुए उसे एक आदर्श नागरिक बनावें।

परिशिष्ट

१. यौनिक रोग व गर्भवती—

शराब, उपदंश व क्षय आज की सभ्यता की देन है। सभा सोसायटियों में लाल परी नाचती हुई दिखती है। कामुक वातावरण यौनिक आचरण को छिन्न भिन्न कर रहा है। होटलबाजी, नजदीकी मेल जोल, शारीरिक कमजोरियां क्षय को बढ़ावा देती हैं। क्षय पीड़ित माता के बच्चे को मां से अलग कर इससे बचाया जा सकता है, शराबी सुधर कर अपने बच्चे के सामने आदर्श बन सकता है पर यौनिक रोग विशेषकर उपदंश से पीड़ित माता अपने बच्चे को रोग देकर उसका भविष्य बिगाड़ देती है। यदि रोग हो गया हो तो जब तक वह पूर्णरूप से अच्छा न हो जाय तब तक निग्रहियों (Cantraceptives) का उपयोग करना चाहिये और कभी भी भूलकर संतान उत्पन्न नहीं करना चाहिये। यौनिक आचरणहीनता समाज को ले डूबती है। हमें तो केवल इतना कहना है कि यदि रोग हो भी गया है और जचकी को तीन माह ही बाकी हैं तो भी आधुनिक चिकित्सा से आने वाले शिशु को इससे बचाया जा सकता है। रोग से मुक्त व स्वस्थ पैदा होना हर शिशु का अधिकार है- वह उसे मिलना चाहिये। (इस विषय पर हमारे यहां से प्रकाशित 'समाज आचरणहीनता व यौनिक रोग' अवश्य पढ़ें। -प्रकाशक)

२. गर्भवती की विशेष आवश्यकताएं—

अ. लौह तत्व—खून के बनने और बनाने में लौह तत्व की विशेष आवश्यकता रहती है। साधारण भोजन में हमें यह तत्व इतना मिल जाता है कि मनुष्य को अलग से इसकी आवश्यकता नहीं रहती पर स्त्रियों में ऐसी बात नहीं है। उन्हें अक्सर खून की कमी हो जाती है और उसका कारण है मासिक धर्मों व जचकी में उनके खून का निकल जाना।

एक मासिक धर्म के समय ¾ छटाक से ३½ छटाक तक खून निकलता है। यदि हर समय २½ छटाक से अधिक खून निकल जाये तो स्त्री में रक्त की कमी (anaemia) हो जाता है।

गर्भ और अपरा के बढ़ने में लौह तत्व की बहुत आवश्यकता रहती है। यह तत्व जचकी के समय ही लगभग ५००–७०० मि. ग्राम निकल जाता है जब कि हमारी प्रति दिन की आवश्यकता केवल १०–११ मि. ग्राम की रहती है और आखिरी महीनों में तो गर्भिणी को १५-२० मि. ग्रा. प्रति दिन मिलना चाहिये इसलिये इस समय गर्भवती को लौह तत्व मिश्रित औषधियां देना चाहिये।

ब. चूना—हमारी हड्डियों व दांत की बनावट में तो यह आता ही है पर साथ ही साथ यह हर अवयव की बनावट में हाथ रहता है। गर्भ के पालते और शिशु को दूध पिलाते समय इसकी विशेष आवश्यकता रहती है। इसकी कमी से शिशु को

सूखी व टिटैनी (Rickets, tetany) सरीखे रोग हो जाते हैं और जच्चा की हड्डियां कमजोर (Osteomalacia) हो जाती हैं। कमजोर हो जाने से भोजन पचता नहीं है इसलिये उनमें धीरे धीरे चिड़चिड़ापन व खून की कमी, हाथ पैर में एंठन, सिर में दर्द, नींद की कमी आदि भी उपद्रव खड़े हो जाते हैं।

गर्भवती को इसकी पहिले महीनों में एक ग्राम और आखिरी महीनों में डेढ़ ग्राम प्रति दिन के हिसाब से जरूरत पड़ती है। पहिले छह महीनों भ्रूण में यह केवल ५.४ ग्राम ही पाया जाता है पर बाद में पूर्ण गर्भ बनने पर यह ३०.५ ग्राम तक पाया जाता है। दूध और अंडे ही इसे प्राप्त करने के सबसे उत्तम साधन हैं। अच्छा हो कि यदि प्रतिदिन गर्भवती डेढ़ सेर दूध पिया करे। इतना दूध पीने से उसे इस तत्व के सिवाय अन्य तत्व अर्थात् नत्रजन पदार्थ, शीघ्र पचनेवाली शर्करा, स्निग्ध तत्व, खनिज तत्व आदि भी अच्छी मात्रा में मिलेंगे। इसीलिये चूने के तत्व की पेटेन्ट गोलियां दूध का मुकाबला कभी भी नहीं कर सकतीं।

स. जीवनतत्व—इनके विषय में पहिले बताया जा चुका है पर अब हम देखेंगे कि कौन सा जीवनतत्व किस वस्तु में रहता है और उसकी कमी के कारण हमें कौन से रोग भुगतना पड़ते हैं। वैसे तो नित्य प्रति खोज चल रही है और विज्ञान ने बहुत से नये जीवन तत्वों का पता लगाया है। हम केवल प्रमुख पर ही विचार करेंगे।

जीवन तत्व	मुख्यत: किसमें मिलता है	कमी से उत्पन्न रोग
ए.	दूध, मछली का तेल, मलाई, अंडे का पीला भाग, गाजर, हरी भाजी।	रतौंधी (रात को न दिखना), रोग प्रतिरोधक शक्ति का कम होना, चमड़े में सूखापन व कड़ापन आना।
बी.	अनाज विशेषकर चांवल के बाहिरी छिलके (चोकरादि), अंडे का पीला भाग, सेम, मटर, यकृत, हरी भाजी, दूध।	भूख की कमी, थकावट, बैरी-बैरी, पैलेग्रा, खून की कमी।
सी.	ताजी हरीभाजी, संतरा, निम्बू, आंवला, टमाटर, गोभी, शलगम, पपीता।	मसूड़ों का फूलना (Scurvy), खून की कमी, कमजोरी, चिड़-चिड़ापन, चमड़े के नीचे खून का फटना।
डी.	दूध, अंडा, मक्खन, मछली का तेल।	चूना और फास्फरस के बराबर उपयोग न होने से बच्चों में सूखी, बड़ों में हड्डी की कमजोरी।
ई.	दूध, मक्खन, विभिन्न चीजों के अंकुर, अंडे का पीलापन, चुकन्दर।	गर्भपात, वंध्यत्व, मांसपेशियों की कमजोरी।
के.	हरी भाजियां, पालक।	खून का जल्दी न जमना।

स्त्रियों को जीवनतत्व व खनिजतत्वों की आवश्यकता

प्रकार	भोजन की गर्मी	ए यूनिट	बी १ मि.ग्रा.	बी २ मि.ग्रा.	निकोटिनिक एसिड,मि.ग्रा.	सी मि.ग्रा.	डी यूनिट	चूना ग्रा.	फास्फरस ग्रा.
आरामवाली	२४००	५,०००	१	१.५	१०	७०		१	.८
मामूली कामवाली	२४००	५.०००	१.२	१.५	१२	७०		१	.८
बहुत कामवाली	३०००	५०००	१.५	१.५	१५	७०		१.३	.८
गर्भवती	२४००	६०००	१.५	२.५	१५०	१००	४००से८००	१.५	१.५
दूध पिलानेवाली	२०००	८०००	१.५	३	१५०	१५०	८००से१०००	२	२

नत्रजन व शर्करा तत्व ४ और स्निग्ध तत्व ६ यूनिट प्रति ग्राम वजन के हिसाब से गर्मी देते हैं। भोजन में इनका इस गर्मी देने का अनुपात १५, ५० व ३५ % उचित माना गया है।

३. प्रसव तिथि निकालना—

यह (प्रसव तिथि) नीचे दी हुई तालिका से निकाली जा सकती जाती है।

आखिरी माहवारी का माह	माहवारी के प्रथम दिन की तिथि	जोड़ी जाने वाली संख्या	प्रसव का संभावित माह
जनवरी	+	७	अक्टूबर
फरवरी	+	८	नवम्बर
मार्च	+	५	दिसम्बर
अप्रैल	+	५	जनवरी
मई	+	४	फरवरी
जून	+	७	मार्च
जुलाई	+	६	अप्रैल
अगस्त	+	७	मई
सितम्बर	+	७	जून
अक्टूबर	+	७	जुलाई
नवम्बर	+	७	अगस्त
दिसम्बर	+	६	सितम्बर

१. मान लिया जाय आखरी माहवारी का पहिला दिन २ जनवरी था तो २ जनवरी में सामने वाली संख्या ७ जोड़ने से संख्या ९ आती है और सामने वाला माह अक्टूबर है इसलिये जचकी की संभावित तारीख ९ अक्टूबर हुई।

२. मान लिया जाय आखिरी माहवारी का पहिला दिन ३१ जुलाई को पड़ता था। तो ३१ जुलाई में सामने वाली ६ संख्या जोड़ने से ३७ संख्या आती है और सामने का माह अप्रैल है अर्थात् जचकी की तारीख ३७ अप्रैल हुई पर अप्रैल में ३० दिन होते हैं इसलिये ठीक तारीख ७ मई हुई।

४. दूध बढ़ाने के उपाय—

१. शिशु को आंचल से नियमित समय पर दूध पिलाओ।

२. आराम अधिक करो।

३. दूध पिलाने के पहिले आध घंटा लेट कर आराम करो।

४. द्रव पदार्थ विशेष कर पानी, दूध, शोरबा आदि खूब पियो। शराब बेकार और अनुपयुक्त है।

५. आंचलों को पहिले गरम, फिर ठंडे और फिर गरम पानी से अच्छी तरह से धो।

६. यदि शिशु दूध नहीं पीता तो पहिले बताई हुई विधि से आंचल को खाली करो।

५. शिशु की बाढ़ के कुछ तथ्य

अ. *शारीरिक व मानसिक विकास—*

चौथे सप्ताह में— मुस्कराहट सरीखा मुंह बनाता है, ठुड्डी उठाता है।

छठवें सप्ताह में— 'आह' 'ऊ' की आवाज करता है।

दूसरे माह में— सीना उठाता है।

तीसरे माह में- आंखों पर अधिकार, जिस तरफ चाहे जल्दी आंखें घुमा सकता है।

साढ़े तीन माह में- हाथों पर अधिकार, इच्छा पूर्वक चीज पकड़ सकता है।

चौथे माह में— जोर से हंसता है, खड़खड़ाहट को पहिचानता है, दूध पीने की शीशी से परिचित हो जाता है।

छठवें माह में— किलकारी मारता है, बिना सहारे बैठ जाता है, चीजें पकड़ने के लिये हाथ बढ़ाता है।

सातवें माह में— पहिला दांत निकलता है।

दसवें माह में— हाथ पैर के बल रेंगता है, पहिले पहिल शब्द बोलता है, समझने के लिये चीजों की तोड़-फोड़ करता है।

पन्द्रहवें माह में— चलता है।

अठारहवें „ „— बड़ों की नकल करता है, अर्थ रहित कुछ भी बोलता है।

तीसरे वर्ष में— सादे प्रश्नों का उत्तर देता है, चम्मच का उपयोग कर सकता है।

ब. *शिशु की नब्ज व सांस की गति*—शिशु की नब्ज व सांस बहुत जल्दी चला करती है। कभी कभी माता पिता इनकी तेज गति से घबरा जाते हैं। इसलिये उनकी स्वाभाविक गति नीचे दी जाती है।

आयु	नब्ज की गति प्रति मिनिट	सांस की गति प्रति मिनिट
गर्भ में	१५०-१३०	
नवजात शिशु	१४०-१३०	
प्रथम वर्ष में	१३०-११५	३५
द्वितीय वर्ष में	११५-१००	२५
तृतीय वर्ष में	१००-६५	
८-१४ वर्ष में	औसतन ८४	२०
वयस्क की	औसतन ७२	१८
वृद्ध	औसतन ७६	

स. शिशु की ऊंचाई—शिशु का वजन बढ़ना चाहिये। वजन के साथ ऊंचाई बढ़ती है। वह इस प्रकार रहती है।

नवजात शिशु	१६ इंच
३ माह	२२ इंच
६ माह	२४ इंच
९ माह	२५ इंच
१२ माह	२७ इंच

एक वर्ष से ५ वर्ष तक ३½" प्रतिवर्ष व बाद में १२ वर्ष तक २" प्रतिवर्ष के हिसाब से ऊंचाई बढ़ा करती है।

साहाय्य पुस्तकें

1. A Short Practice of Midwifery — *Henryjellet* M. D. F. R. C. P.I.

2. Brennemanns Practice of Pediatrics — Vol I.

3. All about the baby — *Belle Wood-Comstock* M.D.

4. The Mother Craft Manual — *Mabel Liddiard* Matron Mother Craft Trainning Society, London.

5. The Health of Mother & Child — *Published by* Central Council of Health Education, London.

6. बालविकास प्रथम सात वर्ष — डा० पी. एल. चोपरा ।

मुद्रक—चलचित्र प्रेस, कमानियां गेट, जबलपुर ।